ISSN : 2456-8856

पंजीयन संख्या RNI No.: MPHIN/2002/9510 डाक पंजीकृत क्रमांक मालवा डिवीजन/204/2021-2023 उज्जैन (म.प्र.)

UGC Care Listed and Peer Reviewed Referred Bilingual Monthly International Research Journal

प्रेषण दिनांक 30 पृष्ठ संख्या 28

आश्वस्त

वर्ष 26, अंक 242 दिसम्बर 2023

शत-शत नमन

संपादक – डॉ. तारा परमार

भारती दलित साहित्य अकादमी मध्यप्रदेश, उज्जैन की अन्तर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका

आश्वस्त

वर्ष : 26 अंक 242
दिसम्बर 2023

आश्वस्त

(सन् 1983 से निरंतर प्रकाशित)

RNI No.: MPHIN/2002/9510
ISSN : 2456-8856

भारती दलित साहित्य अकादमी मध्यप्रदेश, उज्जैन (पंजीयन क्रमांक 2327 दिनांक 13/05/1999) की मासिक पत्रिका

संस्थापक सम्पादक
डॉ. पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी

संरक्षक
सेवाराम खाण्डेगर
11/3, अलखनन्दा नगर, बिड़ला हॉस्पिटल के पीछे,
उज्जैन मो.: 98269-37400

परामर्श
आयु. सूरज डामोर IAS
पूर्व सचिव-लोक स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण वि.
म.प्र.शासन, भोपाल मो. 094253-16830

सम्पादक
डॉ. तारा परमार
9-बी, इन्द्रपुरी, सेठी नगर, उज्जैन-456010
मो. 94248-92775

सम्पादक मण्डल :
डॉ. जयप्रकाश कर्दम, दिल्ली
डॉ. खन्नाप्रसाद अमीन, गुजरात
डॉ. जसवंत भाई पण्ड्या, गुजरात
डॉ. शैलेन्द्र कुमार शर्मा, म.प्र.

Peer Review Committee
डॉ. श्रवणकुमार मेघ, जोधपुर(राजस्थान)
प्रो. दत्तात्रय मुरुमकर, मुंबई (महाराष्ट्र)
प्रो. रश्मि श्रीवास्तव, उज्जैन (म.प्र.)
डॉ.बी.ए.सावंत, सांगली (महाराष्ट्र)

कानूनी सलाहकार
श्री खालीक मन्सूरी एडव्होकेट, उज्जैन

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1	अपनी बात	डॉ. तारा परमार	3
2	राजस्थान राज्य के जोधपुर जिले की शेरगढ़ तहसील के शहीदों की विधवाओं के लिये बनाई गयी कल्याणकारी योजनाओं का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन	योगिता रानी पंवार (शोधार्थी)	4
3	Right to Protest and Its Constitutionality	Prabhjot Singh Sethi (Research Scholar)	8
4	कविता में प्रतिरोध-स्मृति और विस्मृति के बीच	डॉ. ए. एस. सुमेष	12
5	मंत्र शक्ति 'करो या मरो' - एक परिचय	डॉ. इमरान अहमद	15
6	स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में दलित पैंथर आंदोलन का ऐतिहासिक विश्लेषण	डॉ. सुरेन्द्र सिंह	17
7	लोकतंत्र के प्रति डॉ. अम्बेडकर का दृष्टिकोण	डॉ. भरतलाल मीणा डॉ. महेशचन्द्र गोठवाल	20
8	भावों का स्पंदन : एक महत्पूर्ण काव्य-संग्रह पुस्तक समीक्षा	रत्न कुमार सांभरिया (समीक्षक)	24
8	यादव समाज से प्रकाशित पत्र-पत्रिका एवं स्मारिकाएँ	डॉ. रुपचंद गौतम	25

UGC Care Listed Journal

खाते का नाम - आश्वस्त (Ashwast)
खाते का नं.- 63040357829
बैंक - भारतीय स्टेट बैंक,
शाखा- फ्रीगंज, उज्जैन (Freeganj, Ujjain)
IFS Code - SBIN0030108

Web : www.aashwastujjain.com
E-mail : aashwastbdsamp@gmail.com

एक प्रति का मूल्य	:	रुपये 20/-
वार्षिक सदस्यता शुल्क	:	रुपये 200/-
आजीवन सदस्यता शुल्क	:	रुपये 2,000/-
संरक्षक सदस्यता शुल्क	:	रुपये 20,000/-

विशेष : सम्पादन, प्रकाशन एवं प्रबंध अवैतनिक तथा पत्रिका में प्रकाशित विचारों से सम्पादक-मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है। विवाद की स्थिति में न्यायालय क्षेत्र उज्जैन रहेंगा।

अपनी बात

बाबासाहेब डॉ. भीमराव अम्बेडकर एक समाज वैज्ञानिक थे। उन्होंने सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, विधिक तथ्यों का विवेचन प्रत्यक्ष अनुभव एवं तटस्थ विश्लेषण के आधार पर किया तथा परम्परागत सामाजिक ढांचे को संपोषित करनेवाली वैचारिकी की मानवीय आधार पर तर्क संगत समीक्षा की है, जिसमें लोकतांत्रिक समाजवाद की अवधारणा–भेदभाव रहित समाज की स्थापना करना है। मानव–मानव का सम्मान हो, ऐसी उनकी समाजवादी अवधारणा मानवता से संचालित है। वर्तमान परिदृश्य में इसी मानवतावादी मानसिकता की महती आवश्यकता है।

मानवता के विकास के इतिहास में विश्व में अनेक विचारधाराएं आई और पश्चिमी देशों में चार प्रमुख क्रांतियाँ हुई। एक फ्रांस की क्रांति 18वीं शताब्दी में, दूसरी अमेरिका की 1964 में सिविल राइट्स एक्ट, तीसरी रूस की क्रांति जो मार्क्स के सिद्धांतों से प्रभावित होकर लेनिन के द्वारा की गई, चौथी क्रांति माओ के नेतृत्व में चीन में सामाजिक व सांस्कृतिक समानता के लिये हुई।

इससे 300 वर्ष पहले यदि हम देखें तो विश्व में दो धार्मिक क्रांतियाँ हुई जो क्रिस्टालर तथा प्रोटेस्टेन्ट आन्दोलन कहे जाते थे। इसी प्रकार पश्चिमी विश्व में विज्ञान ने धर्म पर प्रश्न किया। धर्म ने अंधविश्वास, पाखण्ड फैलाकर मानव को गुलाम बनाने का जो काम किया, इस पर पश्चिमी विश्व में प्रश्न किये। इस प्रकार एक विज्ञान की क्रांति आयी। विज्ञान ने केवल धर्म को ही चैलेंज नहीं किया बल्कि भौतिक जगत को भी प्रभावित किया। भौतिक जगत दो प्रकार के हैं–मानसिक व भौतिक। इनको कैसे सुखी बनाया जा सकता है, इसकी परिकल्पना की गई। इस प्रकार विज्ञान के अंदर तीन क्रांतियाँ आई–एक औद्योगिक क्रांति, दूसरी सूचना क्रांति व तीसरी जैविक क्रांति।

प्रश्न है कि क्या इन क्रांतियों से मानव दुःखों का अंत हुआ? विवेकपूर्ण विश्लेषण से निष्कर्ष निकलता है कि न तो फ्रांस, अमेरिका, यूरोप, रूस व चीन की क्रांति महान थी और ना ही मार्क्स, लेनिन, स्टालिन, माओ, कास्ट्रो, हिगल, रूसो, गांधी, गोलवरकर की विचारधारा महान थी जिनसे मानव दुखों का अंत संभव है, बल्कि विश्व की महान क्रांति बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर की क्रांति है जो केवल 36 वर्ष में (1920 से 1956) 3600 वर्ष की धर्मशास्त्रों द्वारा जाति व्यवस्था पर आधारित ना केवल आर्थिक बल्कि चौतरफा गुलामी जिसमें सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, मानसिक राजनीतिक, भौतिक सभी गुलामियों को पूर्ण अहिंसक तरीके से आधारहीन कर दिया, महत्वपूर्ण बात यह है कि बाबासाहेब ने आंदोलन को अकेले ही चलाया।

देश में जब ब्रिटिशर्स आये तो देश की सभ्यता में बहुत बड़ा परिवर्तन आया और वह परिवर्तन तब आया जब बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर ने देश को संविधान दिया। जिससे नये भारत का नवनिर्माण हुआ जिसे हम संवैधानिक भारत कहते हैं। संविधान से देश में चमत्कारी परिवर्तन लाया जा सकता है। इसलिये संगठन और आंदोलन का संविधान होना अति आवश्यक है। बाबा साहेब ने दलित, आदिवासी, पिछड़ा वर्ग, धर्मान्तरित अल्पसंख्यक व महिलाओं को संदेश दिया कि–''शिक्षित बनो, संघर्ष करो और संगठित रहो।'' इसके साथ ही बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर ने दो महत्वपूर्ण संदेश हम लोगों को और दिये हैं, वे हैं–हमें जातियों का बीज नष्ट करना है और राजनीतिक सत्ता को प्राप्त करना है। यदि हमें स्वाभिमान व गौरव युक्त जीवन चाहिये तो बुद्धिजम् को स्वीकारना होगा। बाबासाहेब के आंदोलन की दो महान ऐतिहासिक उपलब्धियाँ हैं, पहली संविधान और दूसरी धम्म। मानव अधिकारों की देश व दुनिया में बहुत चर्चा होती है। मानव अधिकारों का आंदोलन बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर ने 1927 में शुरू किया जिसमें 'महाड़ जल सत्याग्रह' और 'कालाराम मंदिर–प्रदेश का आंदोलन प्रमुख है।

बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर के मानवाधिकार और सामाजिक न्याय के पांच लक्ष्य हैं –

पहला – भारत के लोगों के लिये समता, स्वतंत्रता, बंधुता व न्याय के सिद्धांतों को अर्थपूर्ण बनाने के लिये संवैधानिक अधिकार व उनकी सुरक्षा प्राप्त करना।

दूसरा–समता, स्वतंत्रता, बंधुता व न्याय पर आधारित आदर्श समाज के लिये जाति व्यवस्था को समाप्त करना।

तीसरा–आर्थिक लोकतंत्र की स्थापना हेतु जाति व वर्ग आधारित अर्थव्यवस्था को समाप्त करना। लोग राजनैतिक लोकतंत्र की बात करते हैं, बाबासाहेब आर्थिक व सामाजिक लोकतंत्र की भी बात करते हैं।

चौथा–शासनकर्ता जमात बनना।

पांचवा–प्रबुद्ध भारत का निर्माण करना।

– डॉ. तारा परमार

राजस्थान राज्य के जोधपुर जिले की शेरगढ़ तहसील के शहीदों की विधवाओं के लिये बनाई गयी कल्याणकारी योजनाओं का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

– योगिता रानी पंवार (शोधार्थी)

सारांश : विधवाए, शहीदों की विधवाएँ हिन्दू धर्म में वर्षो से शोषित, उपेक्षित वह अंग है जो अपने वैधव्य से उत्पन्न कष्टप्रद स्थितियों, छदम जातिय गौरव से उद्‌गमित सामाजिक आचार संहिता को अपना भाग्य मानकर जीवन भर के लिए स्वीकार करने को विवश है। शहीदों की विधवाएँ अपने जीवन साथी के शहीद होने के बाद भावनात्मक रूप से विखण्डित हो जाती है। किसी भी देश, राष्ट्र, राज्य, समुदाय के सर्वांगीण विकास, प्रगति हेतु इन लोगों की सक्रिय भागीदारी हर क्षेत्र में इन लोगों का सशक्त विकास होना अति आवश्यक है। भारत–पाक युद्ध के बाद 1999 में कारगिल क्षेत्र में **आपरेशन विजय** के दौरान वीरगति को प्राप्त (शहीद) सैनिकों, उनके आश्रितों, परिवार के प्रति समाज में उत्पन्न सहानुभूति की लहर ने सरकार को इन शहीद परिवारों, इनके पुनर्वास, कल्याण हेतु विशेष उपाय करने की दिशा में प्रेरित किया ।

संकेत शब्द :– शोषित, वीरगति छद्‌म जातिय गौरव भावनात्मक विखण्डित, समुदाय, आश्रित ।

भारतीय समाज में शहीदों की विधवाओं की स्थिति अनेक प्रकारों के विरोधों से ग्रस्त रही है। एक तरफ वह परम्परा में शक्ति देवी के रूप में दूसरी तरफ शताब्दियों से अबला, माया के रूप में देखी गई है। दोनों ही अतिवादी धारणाओं ने इनके प्रति समाज की समझ को और उनके विकास को उलझाया हैं इन लोगों को सहज मनुष्य के रूप में देखने का प्रयास पुरूषों, समाज ने तो किया ही नहीं स्वयं इन शहीदों की विधवाओं ने भी नहीं किया। समाज, देश के विकास में पुरूषों के बराबर भागीदारिता नहीं बनाने से तो यह पिछड़ी हुई रही है किंतु पुरूष के बराबर स्थान अधिकार मांगने के महिला मुक्ति आंदोलनों में भी इनकी स्थितियों को काफी उछाला है। इनके सम्बन्ध में धार्मिक, आध्यात्मिक धारणा ने अनेक तरह की भ्रान्तियाँ पैदा की। भारतीय समाज में एक ओर रूढ़िगत सोच आधुनिकता के उन्मेष के कारण इनका शोषण होता रहा दूसरी तरफ आधुनिकता की अवधारणा के साथ उसे पुरूषों के बराबर सामर्थ्यवान समझने का अभियान भी चला। सम्पूर्ण विश्व में विभिन्न कालानुक्रम में इनकी जगह हाशिये पर है। इन्हें सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक स्तर से काटकर घर की चारदीवारी के भीतर रखने का प्रयास किया। विधवा होते ही इन्हें सामाजिक उत्सवों, त्यौहारों, मांगलिक कार्यों में आमंत्रित नहीं किया जाता है (माग्रेट आवेन)। विधवाओं को समाज हीन दृष्टि से देखता है। इनका जीवन कठिनाईयों, संघर्षो से परिपूर्ण होता है क्योंकि समाज ने इन पर परम्पराओं, प्रथाओं के माध्यम से कई प्रतिबंध लगाये गये है (शैली गुनिंग)। विधवाओं को आर्थिक, सामाजिक, भावनात्मक, मानसिक, अकेलापन, असभ्य व्यवहार, अधिकारों से वंचित करना जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। विधवाओं की बढ़ती संख्या के लिए युद्ध, उग्र आंदोलन आंतकवाद है (डॉ. अनुप्रिया मलिक)। पति की मृत्यु के बाद विधवाओं की स्थिति दयनीय हो जाती है इनके मानवाधिकारों का हनन किया जाता है (के. मोल्पथी)।

राजस्थान राज्य के जोधपुर जिले की शेरगढ़ तहसील के शहीदों की विधवाओं का शोधार्थी द्वारा अध्ययन करने पर पता चला है कि शहीदों की विधवाओं के वर्तमान में आधुनिकीकरण वैश्वीकरण सरकार द्वारा लागू की गई कल्याणकारी योजनाओं द्वारा स्थितियों में परिवर्तन हुआ है किंतु मध्यकालीन परिस्थितियों के कारण इनको आधुनिक युग में सामंजस्य बैठाने में कई समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। सरकार ने इनकी स्थिति को सुधारने हेतु महिला आयोग 1999

महिला एवं बाल विकास 18 जून 2007 के आदेशानुसार महिला अधिकारिता निदेशालय की स्थापना की । सरकार द्वारा कई कल्याणकारी कार्यक्रमों, योजनाओं को लागू किया गया ताकि शहीदों की विधवाएँ हर क्षेत्र में आत्मनिर्भर बन सके स्वरोजगार, सशक्तीकरण का विकास हो सके ।

राजस्थान राज्य की जोधपुर जिले की शेरगढ़ तहसील की शहीदों की विधवाएँ : पुनर्वास एवं कल्याणकारी कार्यक्रम योजनाएँ –

प्रदेश के गौरव सैनानियों, युद्ध वीरांगनाओं, उनके परिजनों गैलेण्ट्री अवार्ड धारकों, राजस्थान राज्य के जोधपुर जिले की शेरगढ़ तहसील के शहीदों की विधवाओं को राजस्थान सरकार द्वारा देय सुविधाएं निम्न है प्रदेश की वीरांगनाओं (विधवाओं) को विशेष पहचान पत्र दिया जाता है जिसे सरकारी कार्यालय में दिखाने पर उनके कार्यो को प्राथमिकता दी जाती है। द्वितीय युद्ध में नान पेंशनर को वित्तीय सहायता 01.04.1999 से पूर्व युद्धों काउन्टर इन्सर जैसे ऑपरेशनों में शहीदों की विधवाओं को सम्मान भत्ता, कृषि भूमि का आवंटन, विद्युत कनेक्शन शहीदों के परिजनों को नियोजन, निःशुल्क शिक्षा, छात्रवृत्ति, परमवीर अशोक कीर्ति चक्र, सर्वोत्तम युद्ध सेवा मेडल दिया जाता है। शहीदों की विधवाओं माता–पिता को आर्थिक सहायता, शहीदों को सम्मान जैसे – विद्यालय, चिकित्सालय, औषधालय मार्ग, पार्क सार्वजनिक स्थान का नामकरण शहीद सैनिकों के नाम किया जाता है। इनके बच्चों, माता–पिता, विधवाओं को बस में निःशुल्क रोडवेज पास दिया जाता है, शौर्यपदक धारकों को नकद पुरस्कार दिया जाता है। ट्रेटा प्लैजिक, पैराप्लोजिक पूर्व सैनिकों को 20 हजार रूपये आर्थिक मदद देते है। वीरांगना (विधवाओं) छात्रावास पुनर्वास केन्द्र बालक/बालिका छात्रावास खोला गया है। सैनिक विश्राम गृह खोले गये है। अमलगम ट्रेड फण्ड से चिकित्सा छात्रवृत्ति, विवाह, तत्काल सहायता दी जाती है। गौरव सैनानियों की रैलियां निकाली जाती है। ध्वज दिवस मनाया जाता है। जिला सैनिक बोर्ड की स्थापना की, सेवानिवृत्त सैनिकों, उनके परिजनों के लिए भूतपूर्व सैनिक हैल्पलाईन, सेवारत सैनिकों, उनके परिजनों के लिए कॉल सेन्टर की स्थापना की । केन्द्रीय सैनिक बोर्ड द्वारा पूर्व सैनिकों की वीरांगनाओं (विधवाओं) उनके परिजनों के लिए केन्द्रीय सैनिक बोर्ड द्वारा पेन्यूरी ग्रान्ट, छात्रवृत्ति दिव्यांग बच्चों को आर्थिक सहायता, पुत्रियों का विवाह अनुदान, चिकित्सा मकान मरम्मत, राष्ट्रीय रक्षा अकादमी (एन.डी.ए.) प्रशिक्षण के दौरान अनुदान अंतिम संस्कार हेतु अनुदान, अनाथ बच्चों, व्यावसायिक प्रशिक्षण, गंभीर बीमारियों, ऋण पर ब्याज हेतु अनुदान देता है। शौर्य पदक सभी गैलेण्ट्री अवार्ड धारकों को दूरसंचार विभाग द्वारा टेलीफोन किराये में 50 प्रतिशत युद्ध विधवाओं, गैलेण्ट्री अवार्ड धारकों को टेलीफोन इन्स्टालेशन चार्जेज में छूट, रेलों में सभी चक्र सीरीज धारकों को प्रथम श्रेणी/द्वितीय श्रेणी, ए.सी. स्लीपर में कप्लीमेंटरी कार्ड पास का प्रावधान राजस्थान हाऊस नई दिल्ली राजस्थान स्थित विश्राम भवनों में ठहरने पर इनसे राज्य के सेवानिवृत्त अधिकारियों की भांति देय दर, निर्धारित अवधि तक आवास भोजन की सुविधा उपलब्ध कराई जाती है। विभिन्न शौर्यचक्र, सेना, नौसैना, वायु सेना मेडल अंलकरण विजेताओं, उनकी विधवाओं को प्राप्त पेंशन पर आयकर में छूट प्रदान की गई है। गैलेण्टी अवार्ड धारकों को इंडियन एयर लाइन्स में हवाई सेवा किराये में 75 प्रतिशत छूट का प्रावधान है। शौर्य पदक धारकों को रोडवेज बसों में निःशुल्क यात्रा सुविधा दी गई है। राज्य सरकार द्वारा भारत सरकार के समान भूतपूर्व सैनिकों की विधवाओं को सैनिक सेवा की पारिवारिक पेंशन के साथ–साथ राज्य सरकार में की गई सेवा के बदले भी पारिवारिक पेंशन दी जाती है, नियोजन हेतु आरक्षण का प्रावधान भी किया गया है। इसके अतिरिक्त सरकार द्वारा स्वाधार कस्तुरबा गांधी बालिका विद्यालय कामकाजी महिलाओं के लिए छात्रावास, राजीव गांधी क्रैच राष्ट्रीय महिला सशक्तीकरण मिशन भारतीय महिला बैंक लिमिटेड,

राजीव गांधी, किशोरी सशक्तीकरण मिशन, मध्य गांगेय क्षेत्र में महिला सशक्तीकरण व आजीविका कार्यक्रम (प्रियदर्शनी) इंदिरा गांधी मातृत्व सहयोग योजना उज्जवला राज्य बालिका नीति, मुख्यमंत्री राजश्री योजना, पी.सी.सपी. एन. डी. टी. एक्ट मुखबिर प्रोत्साहन योजना, बेटी पढ़ाओं बेटी बचाओं मुख्यमंत्री हमारी बेटिया, विदेशों में अध्ययन, सामूहिक विवाह नियमन, अनुदान, विधवा पुनर्विवाह, भामाशाह, चिरंजीवी, निःशुल्क कम्प्युटर प्रशिक्षण योजना, इत्यादि।

सरकार द्वारा दी जाने वाली कल्याणकारी, पुनर्वास योजनाओं की जानकारी के सम्बन्ध में राजस्थान राज्य के जोधपुर जिले की शेरगढ़ तहसील की चयनित शहीदों की विधवाओं की प्रतिक्रियाएं

तालिका संख्या 1

क्र.सं.	सरकार द्वारा दी जाने वाली पुनर्वास कल्याणकारी योजनाओं की जानकारी है	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	10	10
2	नहीं	55	55
3	पता नहीं	—	—
	कुल योग	65	65

प्रस्तुत तालिका संख्या–1 से स्पष्ट होता है कि सरकार द्वारा दी जाने वाली पुनर्वास कल्याणकारी योजनाओं की जानकारी राजस्थान राज्य के जोधपुर जिले के शेरगढ़ तहसील की 10 प्रतिशत शहीदों की विधवाओं को इसकी जानकारी है। 55 प्रतिशत शहीदों की विधवाओं को इसकी जानकारी नहीं है।

क्या आप सरकार द्वारा दी जाने वाली पुनर्वास, कल्याणकारी योजनाओं से संतुष्ट है?

तालिका संख्या 2

शोध अध्ययन हेतु चयनित राजस्थान राज्य के जोधपुर जिले की शेरगढ़ तहसील से चयनित शहीदों की विधवाओं की सरकार द्वारा दी जाने वाली पुनर्वास कल्याणकारी योजनाओं से संतुष्ट है या नहीं इस संदर्भ में प्रतिक्रियाएं

क्र.सं.	सरकार द्वारा दी जाने वाली पुनर्वास कल्याणकारी योजनाओं से संतुष्ट है	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	—	—
2	नहीं	65	65
	कुल योग	65	65

प्रस्तुत तालिका संख्या–2 से स्पष्ट होता है कि राजस्थान राज्य के जोधपुर जिले की शेरगढ़ तहसील की चयनित शहीदों की विधवाओं में 65 प्रतिशत शहीदों की विधवाऐं सरकार द्वारा दी जाने वाली पुनर्वास कल्याणकारी योजनाओं से संतुष्ट नहीं है।

क्या आप चाहती है कि सरकार द्वारा चलाई जा रही पुनर्वास कल्याणकारी योजनाओं में सुधार की आवश्यकता होनी चाहिए ?

तालिका संख्या–3

सरकार द्वारा चलाई जा रही पुनर्वास कल्याणकारी योजनाओं में सुधार की आवश्यकता के सम्बन्ध में राजस्थान राज्य के जोधपुर जिले के शेरगढ़ तहसील की चयनित शहीदों की विधवाओं की प्रतिक्रियाऐं

क्र.सं.	सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं में सुधार की आवश्यकता है?	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	60	60
2	नहीं	—	—
3	पता नहीं	5	5
	कुल योग	65	65

प्रस्तुत तालिका संख्या 3 से स्पष्ट होता है कि 60 प्रतिशत शहीदों की विधवाओं ने कहा कि सरकार द्वारा चलाई जा रही पुनर्वास कल्याणकारी योजनाओं में सुधार की आवश्यकता है। 5 प्रतिशत ने कहा कि सुधार की आवश्यकता नहीं है। निष्कर्ष यह निकलता है कि 60 प्रतिशत शहीदो की विधवाऐं सुधार की आवश्यकता पर बल देती है।

क्या आप सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं का लाभ उठा रही है?

तालिका संख्या–4

सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं का लाभ उठाने के सम्बन्ध में राजस्थान राज्य के जोधपुर जिले के शेरगढ़ तहसील की चयनित शहीदों की विधवाओं की प्रतिक्रियाऐं

क्र.सं.	सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं का लाभ उठाने के सम्बन्ध में	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	10	10
2	नहीं	55	55
	कुल योग	65	65

प्रस्तुत तालिका संख्या 4 से स्पष्ट होता है कि राजस्थान राज्य के जोधपुर जिले की शेरगढ तहसील की 55 प्रतिशत सैनिकों की विधवाऐं सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं का लाभ नहीं उठा पाती। 10 प्रतिशत शहीदों की विधवाऐं ही सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं का लाभ उठा पा रही है क्योंकि कई योजनाओं के बारे में इनको जानकारी ही नहीं है।

निष्कर्ष : सरकार, सैनिक कल्याण बोर्ड द्वारा लागू किये गये कल्याणकारी पुनर्वास, भरण–पोषण कार्यक्रम एक महत्वपूर्ण प्रयास है जो शहीदों की विधवाओं को समाज में सम्मानपूर्वक समानता के साथ जीने का अधिकार देती है क्योंकि यह योजनाएं इनको आकस्मिक विपत्तियों जैसे– बेकारी, अशिक्षा, बीमारी, गरीबी, भावनात्मक असुरक्षा, हिंसा, शोषण के विरूद्ध संरक्षण प्रदान करती है किंतु आज भी शहीदों की विधवाएं समाज में दोयम दर्जे, हाशिये में खड़ी है। क्योंकि नौसेनाधिकारियों, राजनेताओं का योजनाओं में हस्तक्षेप अत्यधिक होता है इन राजनेताओं नौसेनाधिकारियों के भ्रष्टाचार, लालफीताशाही, नौकरशाही, निरंकुशता के कारण युद्ध विधवाओ (कारगिल युद्ध विधवाओं) के लिए बनाई गई योजनाओं का उचित लाभ नहीं मिल पाता है । (लिन्हा बालिंगा टम्न) अतः समाज में इन विधवाओं के प्रति दकियानुसी सोच, दृष्टिकोण, परम्परा, प्रथाओं के अंत के साथ उचित सरकारी तंत्र राजनेताओं का चयन होना चाहिये ताकि भ्रष्टाचार, भाई–भतीजा वाद का अंत हो सके । उचित योजनाओं का सही समय पर क्रियान्वयन हो सके ।

शोधार्थी – योगिता रानी पंवार
जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर
समाज शास्त्र विभाग
मोबा. 9549320087

संदर्भ :
1. आवॅन माग्रेट, 2005 रू विडोहुड चेंज्ड द वे आई लुकड् एट् हयूमन राइट्स, जेड बुक्स पब्लिकेशन, यू.के.।
2. गुनिंग सैली, 28 फरवरी 2007रू द विडोज वारः ए नावल हार्पर कालिन्स पब्लिशर्स लंदन।
3. मलिक डॉ. अनुप्रिया, अक्टूबर 2007रू इम्पॉवरिंग विडोज, सोशल वेलफेयर सेन्ट्रल सोशल वेलफेयर बोर्ड न्यू देहली।
4. मोलाथी के., 2008 रू इम्पावरिंग ऑफ विडोजः ए थ्री जनरेशन स्टेडी, सिअरिअल पब्लिकेश्यान न्यू देहली।
5. बालिगा टन्न लिन्हा, 3 नवम्बर 2010रू सिटिजन्स सीक जस्टिस फॉर कारगिल वार विडोज, द टाइम्स ऑफ इण्डिया, मुम्बई वेन्जडे

RIGHT TO PROTEST AND ITS CONSTITUTIONALITY

- **Prabhjot Singh Sethi** (Research Scholar)

ABSTRACT

With farmers protest in 2020-2021, where they kept sitting on the public spaces for more than a year. The debate also starts as to what all includes in the right to protest, what is the constitutional limit of this right and where does this right start to infringe on the right of others. The Constitution in its express terms of right to assemble peaceably without arms impliedly include the right to protest. The part-III of the Constitution in its article-19 (1)(C) provides for the same. The Indian society is a protest driven society. All the changes took place here are due to protests. Be it introduction of new norms like women's right in their ancestor's property or wiping out of customs like sati. So, it is no the question in front of our constitution framers that to allow this highly celebrated right of Indian society or not. However, keeping in mind, the law and order situation in a just got independence nation, they choose to provide it impliedly. And leave the rest of the interpretation on the shoulders of hon'ble Supreme Court.

INTRODUCTION

The careful king whom no one criticise ruin himself without harmful foes[1]. Without liberty of fair criticism, we neither have purity of state nor of morals[2]. Criticism in the form of protest is the necessary appendage to any public office. Hence those who fill public positions should not be too thin skinned to be offended with anything they receive in the form of criticism for their public acts. They should not be too impulsive in crushing the protests and thereby collaterally throttle or choke the spirit of democracy.

The right to peaceful protest. It defines the society. It evolves the society. It enlightens the society. It

represents the common will of the people in the uncontaminated form.

With indefinite protests, India achieved its freedom. With protests women started getting much required and desired emancipation. Protests evolved Indians in such a way that when our forefathers started to write the Constitution of India for themselves and for the coming generations, though not expressly, they impliedly allowed the right to peaceful protest under Article 19(1)(b) of the Indian Constitution by allowing to assemble peac-eably without arms with Article 19(2) of the Indian Constitution providing for reasonable limits over the same. Since Independence, Indian political system has been witnessing a number of protests, agitations and movements. These protest move-ments seem to be rooted in the broad theoretical framework, the theory of relative deprivation. The assumption of this theoretical frame that is brought to explain the protest movements in general is that, if a section of the people of a society finds reason to feel relatively deprived it resorts to protests to redress the alleged deprivation. However, it should be noted in this connection that not always the deprivation syndrome of the common people acts as the root cause of protests and movements. Rather it is noticeable that it is the perceived deprivation of the few, the leadership that brings about protests and movements in the name of the deprivation of the common masses by mobilizing and organizing the otherwise passive common people for subserving the narrow interests of the leadership who are, for one reason or the other, deprived of the sharing of power but wants to be around the helms of power. And thus, when the leadership cannot come near the power centre by the available legitimate means they resort to the mobilization and organization of the passive common masses as if they are deprived of the share of the benefits of the society, polity and the economy. These are the two broad theoretical frameworks which are involved to explain the roots of protest movements in general and their organizational, functional and behavioural aspects. The protest movements that are being witnessed in India over the decades and

the recent one of farmers can also be explained by these two broad theoretical frameworks. The protest movements in India have been of different types, goals, strategies, mobilization and leadership with the aims of expressing dissent from conditions of powerlessness, injustice or loss of identity and seeking various remedial empowerments and entitlements. As such these movements have influenced and tend to influence the working of the Indian political system in many ways, from the perceived positive contribution to the strengthening of the system to the other extreme pole of feared disintegration of the system. Thus, there has been a number of viewpoints that question the very legitimacy and rationality of these protest movements in a parliamentary democracy like India where the Constitution contains the necessary remedial measures for the grievances.

MEANING OF PROTEST

It is a statement or action expressing disapproval of or objection to something. It also includes where a person expresses an objection to what someone has been said or done. The term "Protest" has come from the latin word "Testis" or "Testari" which means protest.

LATIN LATIN LATIN OLD FRENCH ENGLISH

Testis---→testari---Protestari---→Protester---→Protest

(Witness) (assert) (Make a solemn declaration)

RIGHT TO PROTEST AND THE INDIAN CONSTITUTION

The right to protest at the pedestal of the Constitution has not been defined outrightly. It is impliedly included in the Right to Freedom of Assembly - Article 19(1)(c), where the Citizens have the freedom to peacefully congregate in order to question and object to government actions through demonstrations, agitations, and public assemblies, as well as to form long-term protest movements. When these rights are combined, they allow anybody to peacefully gather and demonstrate against the State's action or inaction. The protests are for democracy, and the objective of the protest is to protect the integrity of flaws in the country. The Constitution also provides for reasonable restrictions on Right to Protest. The right to protest, like other fundamental rights is not absolute and there are reasonable

restrictions which are outlined in Articles 19(2) and 19(3) for the reasons are the state's security, in the interests of India's sovereignty and integrity, public order violation, In terms of ethics or morality, in connection to contempt of court, defamation, encouragement to commit an offence, or relations with other countries that are friendly[3].

Restriction grounds based on violation of public order can be justified only if there is proof that protestors will inspire unlawful or disorderly activities and that such conduct is likely to occur. The Supreme Court of India while checking the constitutionality of the right to protest firstly recognised the right to peaceful protest and also stated that “democracy and dissent go hand in hand," but that "demonstrations expressing disagreement must be held only in specified places." The freedom to demonstrate and express dissent is protected by the Constitution, but it is accompanied by Fundamental Duties as enumerated in **Article 51A,** which states that every citizen has a fundamental responsibility to defend public property and to abjure violence.

Some of the hon'ble Supreme Court's verdict on the right to peaceful protest have been discussed below.

Amit Sahni vs Commissioner of Police and others,[4] The court affirmed the right to peaceful protest against legislation, but cleared that public streets and public areas cannot be occupied forever. Fundamental rights do not exist in isolation. The right of the protestor must be weighed against the right of the commuter, and both must coexist in mutual regard.

Mazdoor Kisan Shakti Sangathan vs. Union of India,[5] In this case, the Supreme Court recognised the basic right to assembly and peaceful protest, but directed that it be controlled so that it does not cause discomfort to residents of Jantar Mantar Road or the offices located there.

Ramlila Maidan Incident vs. Home Secretary, Union of India,[6] The Supreme Court ruled that citizens have a basic right to assemble and demonstrate peacefully, which cannot be revoked by arbitrary administrative or legislative action.

CONCLUSION

The implied inclusion of right to

protest in the Indian Constitution and its exercise is sine qua non for a vibrant democracy. But in absence of any defined law on this subject can cause a serious law and order problem. Salus populi is suprema lex but only such activities under this right can be allowed which does not impinge on the fundamental right of others with impunity. Since if such activities be left un-punished, it would soon create a challenge before authorities maintaining law and order and thus would demean all other available fundamental rights to the people and citizens in India. Even a United Nations Special Rapporteur's report on the right to freedom of peaceful assembly, mentioned that restrictions on the right to peaceful assembly can be imposed in the interests of national security or public order which must be legitimate, necessary, and reasonable to the goal pursued.[7]

- Prabhjot Singh Sethi
Research Scholar, Dept. of Laws
Guru Nanak Dev University,
Amritsar, Punjab
Mob. 9646420898
Address: 23-A, New Golden Avenue,
Amritsar - 143001

References :

1. Vijaydharni vs The Public Prosecutor, 3-6-2020, Criminal Manual number 17137
2. Lord Ellenborough.
3. Kumar Narender, Constitutional law of India, tenth edition, Allahabad law agency, Faridabad,
4. Amit Sahni vs Commissioner of Police and others, AIR 3282, SC 2020.
5. Mazdoor Kisan Shakti Sangathan vs Union of India, AIR 862, SC 2018
6. Ramlila Maidan Incident vs Home Secretary, Union of India, CRL. No. 122 of 2011
7. https://www.ohchr.org/en/special-procedures/sr-freedom-of-assembly-and-association

कविता में प्रतिरोध–स्मृति और विस्मृति के बीच

– डॉ. ए. एस. सुमेष

उल्लुओं की जबान में
कोयल गा सकती है तो गाये
जिसे सिखाना हो उसे सिखाये।
हमारे पास बहुत कम वक्त शेष है–
एक गलत भाषा में
गलत बयान देने से
मर जाना बेहतर है,
यही हमारी टेक है।
(छीनने आये हैं वे, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना)

साहित्य में प्रतिरोध शब्द का प्रयोग सबसे पहले फिलीस्तीनी लेखक गसन कानाफानी ने किया था। वे अपने लेखन में औपनिवेशिक साहित्य और प्रतिरोध साहित्य जैसे साहित्यिक रूपों की बात करते हैं। औपनिवेशिक सत्ता द्वारा संस्कृति पर लगे गहरे घाव

सांस्कृतिक प्रतीकों के माध्यम से प्रकट होते हैं। हम जानते हैं कि भाषा और साहित्य संस्कृति के महत्वपूर्ण प्रतीक हैं। भाषा, साहित्य, कला और इतिहास जैसे सांस्कृतिक प्रतिनिधित्व समाज के रचनात्मक प्रतिरोध के स्रोत हैं। हमारे परिवेश के विशिष्ट सांस्कृतिक तत्व कला की संरचना और चरित्र में प्रत्यक्ष परिवर्तन लाते हैं तो साहित्य का प्रभाव रहस्यमय ढंग से परिलक्षित होते हैं।

अलगाव उपनिवेश के स्पष्ट परिणामों में से एक है। भाषा और संस्कृति की तरह जनता भी अपनी ही धरती से अलग हो जाती है। इसलिए, प्रतिरोध हमारे चारों ओर सत्ता और अन्याय के संकेतों के खिलाफ लड़नेवाले संघर्ष है। संस्कृतियों के बीच अंतर को स्वीकार करना, वर्चस्व के लिए रचनात्मक प्रतिक्रिया देना और संस्कृति के सभी पहलुओं पर प्रतिक्रिया और नवीनीकरण करना आदि कई लक्ष्यों को भाषा और साहित्य की प्रतिरोधात्मक संस्कृति सामने रखती है। सत्ता हमारी स्मृति और अतीत को बिखेर रही हैं। गुमनामी, पूर्वाग्रह, भावुकता और अमानवीयता के स्तंभों में फासीवाद निहित है, और इसका मुकाबला करने का तरीका स्मृति, तर्कसंगता, मानवता और ऐतिहासिक विश्लेषण है ।

साहित्य हमेशा एक शक्तिशाली प्रतिरोध रहा है। साहित्य ने लोगों के लिए, भाषा के लिए, संस्कृति के लिए, कहानी, कविता, उपन्यास, निबंध और आत्मकथा जैसी विभिन्न साहित्य धाराओं के माध्यम से प्रतिरोध की आवाज उठाई है। हमारे लेखकों ने अस्वतंत्रता के खिलाफ सशक्त लड़ाई लड़ी है जो चाहे इतिहास के नियमों के अनुरूप नहीं हो। ऐतिहासिक सन्दर्भ को सूक्ष्मता से परखने पर यह बात आसानी से मालूम पड़ती है कि सत्ता द्वारा जनता के ऊपर अपना अधिकार साबित करने केलिए किये गए हजारों प्रयासों के बावजूद भी उस समय के लेखन में प्रतिरोध का शब्द रहस्यमय ढंग से परिलक्षित है । कविता हमेशा से ही रचनात्मक साहित्य और जन–संघर्ष दोनों ही दृष्टि से सत्ता का प्रबल प्रतिरोध रहा है। 'राजा ने आदेश दिया' नामक छोटी कविता में देवी प्रसाद मिश्र ने इस बात को व्यंग्यात्मक ढंग से यों प्रस्तुत किया है–

राजा ने आदेश दिया – बोलना बन्द
क्योंकि लोग बोलते हैं तो राजा के विरुद्ध बोलते हैं
राजा ने आदेश दिया – लिखना बन्द
क्योंकि लोग लिखते हैं तो राजा के विरुद्ध लिखते हैं

इस तरह राजा के आदेशों ने लोगों को उनकी छोटी–छोटी क्रियाओं का महत्त्व बताया।

फासीवाद के नए चेहरे के रूप में वर्णित समकालीन समय में लेखकों को लिखने की स्वतंत्रता ही नहीं है और उनकी अपनी जिन्दगी भी खतरे में है । इस विकल परिस्थिति में, खोई हुई स्वतंत्रता को पुनरू प्राप्त करना केवल लेखन के माध्यम से ही संभव हो सकता है।

समुदाय और खुद को याद रखने वाले किसी भी लेखक को सबसे पहले जो चीज प्रभावित करती है, वह है उसका स्थान। निर्मला पुतुल की कविता 'संथाल परगना' इसका उत्तम उदाहरण है।

संथाल परगना
अब नहीं रह गया संथाल परगना
बहुत कम बचे रह गए हैं
अपनी भाषा और बेशभूषा में यहाँ के लोग
('संथाल परगना'–निर्मला पुतुल)

स्थानिक चेतना दो तरह से काम आती है । यह एक ऐतिहासिक कथा या एक काल्पनिक पुनर्निर्माण हो सकता है। स्थानीय जागरूकता के माध्यम से पहचान की भावना पैदा करना प्रतिरोधात्मक संस्कृति के निर्माण में सबसे महत्वपूर्ण चरण है। स्वभावतरू सत्ता का पहला कदम उस धरती पर अपना अधिकार स्थापित करना ही हो जाता है जहां मानवता और आत्मनिर्भरता के विभिन्न सन्दर्भ फलते– फूलते थे।

कायापलट हो रही इसकी
तीर–धनुष–मांदल–नगाड़ा – बांसुरी
सब बटोर लिए जा रहे हैं लोक संग्रहालय
समय की मुर्दागाड़ी में लादकर

('संथाल परगना'—निर्मला पुत्तुल)

यहां साहित्य औपनिवेशिकता के विरुद्ध सशक्त प्रतिरोध बन जाता है। एक ऐसी जनता जिसमें कभी समुदाय की भावना थी, अब अपनी अस्मिता से अलग हो गयी है।

उतना भी बचा नहीं रह गया 'वह'
संथाल परगने में
जितने कि उनकी
संस्कृति के किस्से!
('संथाल परगना'—निर्मला पुत्तुल)

किसी भी जनता को नष्ट करने का सबसे आसान तरीका उनकी भाषा को छीनना है। इसलिए भाषाई गौरव को नष्ट करके हमारी पहचान की भावना को नष्ट करने का प्रयास सत्ता निरंतर करता रहता है।

अब, जब हम
हर तरह से टूट चुके हैं,
अपना ही प्रतिबिम्ब
हमें दिखाई नहीं देता,
अपनी ही चीख
गैर की ममम पड़ती है,
एक आखिरी बयान
जीने और मरने का
हम दर्ज कराना चाहते हैं,
वे छीनने आये हैं,
हमसे हमारी भाषा।
(छीनने आये हैं वे, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना)

जाने—अनजाने हम भाषा के माध्यम से सोचते और सपने देखते हैं और इस तरह अपने इतिहास का निर्माण करते हैं। इस प्रकार भाषा भी अधिकार का एक रूप है।

भाषा पर कब्जा आसानी से नहीं आता। यह भाषा में क्रमिक परिवर्तन करके किया जाता है, जिससे यह आभास होता है कि केवल सत्ता की भाषा ही सही है। इस प्रकार वे अपनी भाषा संस्कृति को भूल जाते हैं और सत्ता की भाषा संस्कृति को अपनाते हैं और इस तरह अनजाने में भाषाई परिवर्तन में भाग लेते हैं।

सब अपनी अपनी भाषा भूल चुके थे ।
केवल हम उसके
बने रहने के बोध के साथ जिंदा थे ।
(छीनने आये हैं वे, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना)

जैसे मिलन कुंदेरा स्पष्ट करते हैं, सत्ता के खिलाफ मनुष्य का संघर्ष विस्मृति के खिलाफ स्मृति द्वारा लड़नेवाली लड़ाई या संघर्ष है । यादें वह ढाल हैं जो इंसान को इंसान बनाती हैं। यादों को मिटाकर आदमी अपना अतीत और खुद को मिटा रहा है। कई बार यह इंसान की लाचारी भी होती है। शायद इसीलिए अग्निशेखर की कविताएँ स्मृति और विस्मृति के बीच की जवाहर सुरंग बन जाती हैं।

और संसार था ईर्ष्या से भरा
हमारे प्रति
जबकि हम भाग रहे थे स्वर्ग से
भिंची हथेलियों में जान थी हमारी
कमीज अन्दर थे छिपाये
चिनार के पत्ते
और जेबों में ठूस भरी थी
गाँव की मिट्टी (जवाहर टनल —अग्निशेखर)

इस प्रकार, प्रतिरोध सत्ता के विरुद्ध किये जानेवाला वह युक्ति है जिसका प्रयोग व्यक्तियों, समुदायों द्वारा, व्यक्तिगत रूप से या सामूहिक रूप से, करते हैं । आतंक के मौजूदा माहौल में सत्ता के खिलाफ लड़ने के लिए वाणी का बल अनिवार्य है तलवार और बन्दूक का नहीं। सर्वश्रेष्ठ कला शक्ति का विरोध करेगी। लेखकों के तथाकथित आख्यान में साहित्य कैसे एक प्रतिरोधात्मक शक्ति बन जाता है इसका पता लगाने का दायित्व निश्चय ही हम पाठकों का है।

— डॉ. ए. एस. सुमेष
सह आचार्य व अध्यक्ष
हिंदी विभाग
एम इ एस महाविद्यालय, इडुक्की नेडुमकंडम—685553
मोबा. 9744168522

मंत्र शक्ति 'करो या मरो' : एक परिचय

– डॉ. इमरान अहमद

सारांश : भारतीय स्वाधीनता संग्राम में दिनांक 8 अगस्त भारतीय इतिहास में विशेष महत्व रखता है क्योंकि इस दिन 8 अगस्त 1942 को महात्मा गांधी ने अंग्रेजी हुकुमत को भारत देश से बाहर निकालने के उद्देश्य से भारत छोड़ो आंदोलन प्रारंभ किया था। महात्मा गांधी ने जिस आंदोलन के लिए भारतीय जनता को 'करो या मरो' का नारा दिया। उन्होंने भारतीय जनता से आवाहन किया कि हम अपने देश की स्वतंत्रता के लिए अपना सब कुछ न्यौछावर कर देंगे, गांधीजी के इस प्रभावशाली नारे के परिणामस्वरूप बड़ी संख्या में युवा वर्ग आंदोलन से जुड़ा। उन्होंने अपना पठन–पाठन का कार्य छोड़कर जेल जाने का रास्ता अपनाया साथ ही साथ इस आंदोलन से अंग्रेजी हुकुमत के भी कदम हिल गए और इसी कारण भारत के कई राष्ट्रवादी नेता, आंदोलनकारियों को गिरफ्तार किया जाने लगा ताकि आंदोलन की लहर को कमजोर किया जा सके। परंतु महात्मा गांधी के यह नारे 'करो या मरो' ने लोगों के दिल से जेल, कारावास, आदि का भय तो दूर, लोग अपने आप को देश के लिए बलिदान हो जाने के लिए सरल बात हो गई थी, अर्थात आजादी के लिए अगर इनके प्राण भी चले जाए तो इनके कदम अब पीछे नहीं हटेंगे।

विशिष्ट शब्द : स्वाधीनता, इतिहास, संग्राम, आवाहन, न्यौछावर, प्रभावशाली, बलिदान।

शोध विधि : शोध प्रबंधन अथवा शोध आलेख को प्रस्तुत करना एक कठिन कार्य है। इनके प्रस्तुतीकरण के लिए अनेक उपयोगी प्रविधि प्रचलित है। विज्ञान एवं वाणिज्य के छात्रों एवं शोधार्थियों के लिए प्रायोगिक विधि अनिवार्य है परंतु कला के क्षेत्र में शोध आलेख की प्रविधि बिल्कुल अलग है इसके लिए विश्लेषणात्मक, वर्णनात्मक तथा साक्षात्कार विधि ज्यादा उपयोगी एवं महत्त्वपूर्ण है। शोध आलेख के लिए मुख्यतः द्वितीयक स्रोतों को आधार बनाया गया है इसके लिए मुख्यतः प्रकाशित ग्रंथ, विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में छपे लेख, प्रकाशित एवं अप्रकाशित शोध कार्य इत्यादि को आधार बनाया गया है।

तथ्य विश्लेषण : भारत छोड़ो आंदोलन हकीकत में एक जन आंदोलन था जिसमें भारी संख्या में भारतवासी सम्मिलित थे। इस आंदोलन ने युवाओं को अपनी ओर आकर्षित किया। जो कॉलेज छोड़ जेल का रास्ता अपनाया । महात्मा गांधी ने अपने अहिंसा वादी सोच का अनुसरण कर जो भी राष्ट्रीय स्तर पर आंदोलन चलाए इससे ब्रिटिश सरकार की जड़ को ही हिला दिया सन 1940 के पश्चात गांधीजी ने भारतीयों में आजादी की भावना को अपने चरम तक पहुंचा दिया था और इसी कारण स्थिति को देखते हुए करो या मरो का नारा दिया जो अंग्रेजी हुकूमत की दमनकारी नीतियों का एक उत्तर था । यह 'करो या मरो' सिर्फ एक नारा ही नहीं था बल्कि मंत्र शक्ति था जो औपनिवेशिक शासन के खिलाफ एक जन उभार था इसने स्पष्ट संदेश दिया कि भारत में ब्रिटिश साम्राज्य का सूरज डूबने वाला था ।

अगस्त 1942 में भारतीय राजनेता, सामाजिक कार्यकर्ता, महात्मा गांधी भारत छोड़ो अभियान के लिए एक केंद्रीय व्यक्ति थे। वे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नेता और भारत छोड़ो अभियान सत्याग्रह पर आधारित एक राष्ट्रीय विरोध आंदोलन था जिसने भारत में ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन को समाप्त करने और भारत की मुक्ति स्थापना का आवाहन किया ।

1939 के दूसरे विश्व युद्ध ने भारत की राजनीति

माहौल को भी अपनी चपेट में रखा क्योंकि तत्कालीन वायसराय लॉर्ड लिनलिथगो ने भारतीयों को भी इस में धकेल दिया बिना राय मशवरा लिए। इस पर भारतीय नेता ने विरोध भी किया लेकिन युद्ध का समर्थन इस शर्त पर तय किया गया कि भारतीयों को ब्रिटिश कुछ संवैधानिक रियायतें प्रदान करेंगे। परंतु क्रिप्स मिशन की असफलता ने भारतीयों को निराश कर यह स्पष्ट कर दिया कि ब्रिटिश सरकार युद्ध के बीच किसी भी प्रकार के समझौते और वास्तविक संवैधानिक रियायत देने को तैयार नहीं है। अतः अब और चुप रहने का कोई औचित्य नहीं है। दूसरी ओर युद्ध के कारण महंगाई और जरूरी वस्तुओं की कमी ने जनसाधारण को बहुत असंतुष्ट कर दिया। राष्ट्रीय आंदोलन के नेताओं ने संघर्ष करना इसलिए भी जारी समझा क्योंकि लोगों में निराशा फैलती जा रही थी और यह अनुमान लगाया जा रहा था कि कहीं जापानी हमले का जनता द्वारा प्रतिरोध ही ना हो। और इस परिस्थिति को समझने में गांधीजी पीछे नहीं रहे उन्होंने महसूस किया कि अंग्रेजी हुकूमत के साथ आखिरी टकराव का पल आ पहुंचा। उन्होंने लिखा कि भारत को भगवान भरोसे छोड़ दीजिए अगर और कुछ ज्यादा हो तो उसे अराजकता के भरोसे छोड़ दीजिए। यह व्यवस्थित और अनुशासित अराजकता समाप्त होनी चाहिए । अगर पूरी गैरकानूनी फैलती है तो मैं इसका जोखिम उठाने को तैयार हूं। इस तरह गांधीजी ने अंग्रेजी हुकुमत को भारत छोड़ देने और सत्ता को भारतीयों को सौंप देने की मांग के द्वारा आंदोलन शुरू करने का फैसला किया ।

आंदोलन की शुरुआत कांग्रेस ने कार्यसमिति की बैठक में अंग्रेजी हुकुमत के विरोध में 8 अगस्त 1942 को भारत छोड़ो का प्रस्ताव पेश हुआ और इसी अवसर पर महात्मा गांधी ने स्थिति को भांपते हुए 'करो या मरो' का नारा दिया अर्थात या तो हमें आजाद भारत प्राप्त होगा या हम इसे पाने के लिए मिट जाएंगे, हम हमेशा अपनी गुलामी देखते रहने के लिए जिंदा नहीं रहेंगे। यह वह मूल मंत्र था जिनका आने वाले दिनों में बड़ा प्रभाव पड़ना था। भारत छोड़ो आंदोलन में आम जनता की भागीदारी तथा पूर्ण समर्थन व्यापक बना रहा। विशेषकर छात्रों की भागीदारी इस आन्दोलन में विशेष रूप से देखने को मिलती है। सभी छात्रों ने बढ़–चढ़कर महात्मा गांधी के इस प्रभावशाली शब्द 'करो या मरो' से प्रभावित होकर अपने भविष्य की चिंता किए बिना जेल का रास्ता भी अपनाने को तैयार थे। देश भर के स्वाधीनता सेनानियों की एक ही मांग थी पूर्ण स्वराज । भारत छोड़ो आंदोलन में महिलाओं की भी भूमिका अहम रही थी। उन्होंने न केवल आंदोलन में हिस्सा लिया बल्कि पुरुषों के साथ बराबरी करते हुए इसका नेतृत्व भी किया, हाथों में तिरंगा लिए पुलिस की गोलियों से वे शहीद भी हुई इस आंदोलन में अरूणा आसफ अली, सुचेता कृपलानी, उषा मेहता, आदि महिलाओं ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, साथ ही साथ समाज में सबसे ज्यादा शोषित वर्ग किसान एवं मजदूर ने भी इस आंदोलन में बढ़–चढ़कर हिस्सा लिया यद्यपि मुसलमानों की भागीदारी बहुत उल्लेखनीय नहीं रही इस तरह यह महसूस किया जा सकता है कि भारत छोड़ो आंदोलन ऐसे समय में प्रारंभ किया गया जब संसार जबरदस्त बदलाव के दौर से गुजर रहा था। एक और युद्ध लगातार जारी था तो दूसरी ओर साम्राज्यवाद के खिलाफ आंदोलन तेज होते जा रहे थे।

आंदोलन की घोषणा होने के 24 घंटे बाद ही कांग्रेस कार्यसमिति के तमाम सदस्यों महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू, सरदार पटेल, अबुल कलाम आजाद, आदि को राजद्रोह के आरोप में गिरफ्तार कर लिया गया ताकि आंदोलन की लहर को तोड़ा जा सके। जबरदस्त गिरफ्तारी से अंग्रेजो को लगा कि आंदोलन असफल हो जाएगा लेकिन वह गलत थे। आंदोलन का नेतृत्व करने के लिए जनता के बीच से ही नेता उभरकर सामने आए। प्रदर्शनकारी अंग्रेजों के खिलाफ सड़कों पर उतर गए। सरकारी भवनों पर कांग्रेस के झंडे

फहराना शुरू कर दिए। जनता ने गिरफ्तारी देना और सरकारी कामकाज में व्यवधान उत्पन्न करना शुरु कर दिया। यह विदेशी दासता के खिलाफ मात्र एक आंदोलन नहीं था बल्कि भारतीय जनता में एक नई चेतना और संचार था। इस आंदोलन का इतिहास गुमनाम योद्धाओं के बलिदान से भरा पड़ा है इस आंदोलन के दौरान डॉ राम मनोहर लोहिया, जयप्रकाश नारायण और अरुणा आसफ अली जैसे नेता उभरकर सामने आए। भारत छोड़ो आंदोलन इस अर्थ में एक युगांतर कारी आंदोलन था क्योंकि इसने भारत की भावी राजनीति की आधारशिला रखी। गोवालिया टैंक मैदान में अपने ऐतिहासिक भाषण में गांधी जी ने लोगों को संबोधित करते हुए कहा था कि जब भी सत्ता मिलेगी भारत के लोगों को मिलेगी और वही इस बात का फैसला करेंगे कि इसे किसे सौंपा जाता है। इस आंदोलन में ही आजादी की लड़ाई का नेतृत्व हम भारतीयों को प्राप्त हुआ जिसने देश की स्वतंत्रता का संग्राम लड़ा

निष्कर्ष : इस प्रकार महात्मा गाँधी द्वारा दिया गया मूल मंत्र 'करो या मरो' और उसी के उपलक्ष में चलाया गया आन्दोलन भारत छोड़ो आन्दोलन सही मायने में एक जन आन्दोलन माना जा सकता है जिसमे लाखों भारतवासी ने हिस्सा लिया था। इसने युवा, महिला, कृषक व मजदूर आदि को अपनी ओर आकर्षित किया। हालांकि अंग्रेजी हुकूमत ने आन्दोलन को कुचलने का भरसक प्रयास किया लेकिन उन्हें इस बात का अहसास हो गया कि अब भारत पर शासन करना उनके लिए अत्यंत दुष्कर हो गया। इस आन्दोलन ने गाँव से लेकर शहर तक अंग्रेजी सरकार को चुनौती दी।

– **डॉ. इमरान अहमद**
यूनीवर्सिटी लॉ कॉलेज
विनोबा भावे विश्वविद्यालय, हजारीबाग
(झारखण्ड)–825301
मो. 8340465992

संदर्भ :

1. आर एल सुकल आधुनिक भारत का इतिहास हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय 1987
2. दिनेश, चंद्र, भारद्वाज, आधुनिक भारतीय सांस्कृतिक का इतिहास, प्रकाशन केंद्र, 1980
3. रॉय, श्यामबिहारी, चन्द्र, बिपिन, आधुनिक भारत, कक्षा 12 के लिए इतिहास की पाठ्यपुस्तक, एन. सी. आर. टी. 2005
4. डॉ0. कोलेश्वर, राय, भारत का स्वतंत्रता संग्राम 1857 से 1947, किताब महल, 1987
5. शुक्ल, रामलखन, आधुनिक भारत का इतिहास, हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली, 2015
6. ग्रोवर,बी. एल.,मेहता, अलका एवं यशपाल, आधुनिक भारत का इतिहास रू एक नवीन मूल्यांकन, एस चांद एंड कंपनी, प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली. 2014 ।
7. चक्रवर्ती, विद्युत, तथा पांडे राजेंद्र कुमार, आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतनः विचार व संदर्भ, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2012 ।
8. लिओबार्ड मोसले, भारत के ब्रिटिश राज के अंतिम दिन, आत्माराम एंड संस, 2016
9. विद्यालंकर, सत्यकेतु, भारत की राष्ट्रीय आंदोलन का इतिहास, श्री सरस्वती सदन, नई दिल्ली, 2002 ।
10. चटर्जी, पार्थ, गांधी एंड ब्रिटिश ऑफ सिविल सोसायटी, नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1984
11. सरकार, सुमित, आधुनिक भारत, राजकमल प्रकाशन लिमिटेड, दिल्ली, 2002 ।

स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में दलित पैंथर आंदोलन का ऐतिहासिक विश्लेषण

– **डॉ. सुरेन्द्र सिंह**

सामाजिक आन्दोलन सामूहिक व्यवहार का एक स्वरूप है। यह सामाजिक उद्विकास, प्रगति और विकास की भांति ही परिवर्तन का एक ढंग भी है। मानव अपने व्यवहार की अभिव्यक्ति दो प्रकार से कर सकता है, व्यक्तिगत तौर पर और सामूहिक तौर पर। सामूहिक तौर पर किया गया व्यवहार या तो समाज व्यवस्था का पोषक होता है या उसका विरोधी। सामाजिक आन्दोलनों का संचालन समाज तथा संस्कृति में नवीन परिवर्तन लाने अथवा नवीन परिवर्तनों का विरोध करने के लिए होता है। सामाजिक आन्दोलनों का उद्देश्य

सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक व राजनीतिक क्षेत्रों में आंशिक अथवा आमूल–चूल परिवर्तन लाना हो सकता है। सामाजिक आन्दोलनों के पीछे कोई विचारधारा अवश्य होती है। किसी आन्दोलन का प्रारम्भ पहले असंगठित रूप में होता है और धीरे–धीरे उनमें व्यवस्था व संगठन पैदा हो जाता है। विगत वर्षों में दलित जातियों ने अपनी सामाजिक–आर्थिक दशाओं को सुधारने तथा देश के अन्य समूहों के द्वारा उन पर किये जाने वाले अन्यायों और अत्याचारों के विरूद्ध आवाज उठाने की दृष्टि से अनेक आन्दोलन किये हैं।

अमेरिका के नीग्रो ब्लैक पैंथर की भांति महाराष्ट्र के प्रगतिशील विचारधारा के दलित युवकों ने तथाकथित अम्बेडकरवादी नेताओं की आपाधापी, स्वार्थपरक नीतियों, दोहरे दोगले चरित्र से ऊबकर दलित पैंथर संगठन बनाया जो एक सुगठित सामाजिक संगठन के समरूप वैचारिक आंदोलन बन गया।[1] दलित पैंथर की पहली बैठक बम्बई में 9 जुलाई 1972 को हुई। इस बैठक में बहुत बड़ी संख्या में दलित नौजवान एवं समाजवादी पार्टी के युवक क्रान्ति दल (क्रान्तिकारी नौजवान आन्दोलन) के कुछ सदस्य सम्मिलित हुए। इस बैठक का प्रारम्भ दलित पँथर संगठन के निर्माण को घोषित करने वाले प्रकाशित परचे (हैंडबिल) से हुआ। इसमें बताया गया था कि स्वतंत्रता के पश्चात भी दलितों पर अत्याचार बढ़ रहे हैं और सरकार एवं प्रमुख नेता कोई भी कार्यवाही नहीं कर रहे हैं। इस बैठक में दलित नौजवानों से अपील की कि वे दलित पैंथर के झंडे तले आ जाए तथा अन्याय से लड़ें। यह परचा संगठन के अध्यक्ष सोरते के द्वारा जारी किया गया।[2] ये लोग अपने को पैंथर कहते थे क्योंकि वे कहते थे कि अपने अधिकारों के लिए पैंथर की भांति लड़ा जाए तथा अब वे अत्याचारियों की शक्ति तथा ताकत से नहीं दबेगें पैंथरों के आक्रामक नेता राजा ढाले के लेख "काला स्वतन्त्रता दिन" ने अत्यधिक जागरूकता पैदा की तथा पूरे महाराष्ट्र में दलित पैंथर को प्रचारित कर दिया।[3]

पैंथर संगठन तथा इसकी शाखाएं अर्थात् छावनियां बड़ी ही लचीली होती थीं। छावनियों में बैठक किसी एक नेता द्वारा सम्बोधित की जाती थी। बैठकों में अक्सर दलित पैंथर आंदोलन के उद्देश्यों तथा उसकी आवश्यकता पर जोर दिया जाता तथा साथ ही उसका प्रचार भी किया जाता था।[4] इस आन्दोलन ने वर्तमान संसदीय संस्थाओं और कार्य प्रणालियों का निषेध कर दिया है।[5] दलित पैंथर आंदोलन एक विलक्षण आंदोलन था, जिसने एक ठोस विचारधारा का अनुसरण किया। पैंथरों ने स्पष्ट रूप से डॉ. अम्बेडकर की विचारधारा को एक हथियार के रूप में प्रयोग किया। उन्होंने घोषणा की कि जो भी शोषणकारियों का समर्थन करते हैं, वे पैंथरों के दुश्मन हैं और जो अत्याचार के विरुद्ध लड़ने वाली ताकतें हैं, वे सभी पैंथरों के मित्र हैं। पैंथरों ने प्रण लिया कि 'दलितों' के मुक्ति संघर्ष का उद्देश्य है पूर्ण क्रान्ति।[6]

दलित पैंथर के घोषणा–पत्र ने जहां जागरूक और प्रगतिशील आम युवा पीढ़ी में हलचल पैदा की, वहीं समाजवादी, साम्यवादी, प्रगतिशील लेखकों, विचारकों को झकझोर दिया। दलित पैंथरों ने इसे सामाजिक परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण दस्तावेज माना। उनके द्वारा दावा किया गया कि दलितों पर अत्याचार करने में मुस्लिम काल या ब्रिटिशकाल के मुकाबले आज स्वतंत्र भारत में अधिक हैं।[7] पैंथरों का मानना था कि दलित शक्ति एक सच्चाई है, दलित पैंथर एक प्रतीक है, दलित मुक्ति अवश्यम्भावी है।

सामाजिक आर्थिक क्रांतियों का एक साथ होना अत्यंत आवश्यक है. सामाजिक क्रान्ति ही आर्थिक क्रान्ति के लिए भूमि (मंच) तैयार करेगी। परम्परागत जाति आधारित पेशों को समाप्त करना बेहद जरूरी है इससे कामगारों में भाईचारा स्थापित हो सकता है। योजनाओं में जनसंख्या को ध्यान में रखकर दलितों को उनकी संख्या के अनुपात में हिस्सा मिलना चाहिए। बारहवीं कक्षा तक सभी के लिए मुक्त एवं अनिवार्य शिक्षा होनी चाहिए। समानता पर आधारित सभी को एक जैसी शिक्षा दी जाए। शैक्षिक संस्थानों का राष्ट्रीयकरण होना

चाहिए । स्त्रियों को सामाजिक स्तर पर एवं धार्मिक रूढ़ियों के नाम पर द्वितीय वर्ग का दर्जा समाप्त होना चाहिए।

भारतीय समाज की जड़ता पर लगातार चोट की जाए तथा जन्म से जुड़ी असमानता को समाप्त करने के लिए नये विचारों का सृजन किया जाए। गांवों में ही सामाजिक–आर्थिक शोषण तथा जन्म से जुड़ी असमानता का अत्यन्त घिनौना रूप दिखाई देता है। दलितों को गांवों से निकालकर नजदीकी शहरों में या नये गांवों में एक साथ भारी मात्रा में बसने के लिए लगातार प्रेरित किया जाए। दलितों में जो दूसरों से अपेक्षा रखने की प्रवृत्ति पाई जाती है। उस भावना को समाप्त किया जाए । मानव मूल्यों की स्थापना के लिए विज्ञान और मानवीयता ही आधार हों, शिक्षा का प्रसार इन आदर्शों की प्राप्ति के लिए अत्यन्त आवश्यक कहा जा सकता है। धर्म और परम्परा के नाम पर स्त्रियों पर होने वाला अत्याचार और शोषण जैसे कि देवदासी और उसके जैसी दूसरी अमानवीय अन्य प्रथाएं समाप्त होनी चाहिए।[8]

भारतीय दलित पैंथर अपने आपको सीधे राजनीति से दूर रखेगा। अनुसूचित जाति व जनजातियों के प्रतिनिधियों को उनकी पार्टी ही नहीं बल्कि उन लोगों के प्रति वफादार रहने पर भी दबाव डाला जाएगा, जिसका वे प्रतिनिधित्व करते हैं। ऐसे मित्रों को सहयोग दिया जाएगा जो दलित मुक्ति को सक्रिय सहयोग दे सकते हैं। ऐसे दलितों को राजनीति में प्रोत्साहन दिया जाएगा जिनका दलित मुक्ति ही जीवन लक्ष्य हो। [9]

दलित पैंथर आन्दोलन ने दलितों में ऐसी इच्छा शक्ति का निर्माण किया कि अम्बेडकरवाद फिर से दलित सम्प्रदाय में एक ठोस विश्वास के साथ विकसित हुआ। इस आंदोलन ने एक प्रकार से दलितों के मन में रूढ़िवाद का खात्मा कर दिया था। लेकिन यह उपलब्धि ऐसे ही हाथ नहीं लगी थी इसके लिए इस आंदोलन के नेताओं को समाज के सम्पन्न उच्च जातिय वर्ग से दुश्मनी भी मोल लेनी पड़ी। परन्तु इस आंदोलन को सुदृढता से चलाने के लिए नेताओं को आपसी भाईचारे से भी मुंह मोड़ना पड़ा परन्तु ऐसा नहीं था कि पैंथरों के जितने भी गुट बने वे अप्रभावशाली थे बल्कि इन गुटों के बनने का फायदा यह हुआ कि यह आंदोलन पहले महाराष्ट्र के कौने–कौने फूटा तथा फिर पूरे राष्ट्र के कौने–कौने संचालित हुआ । इस आंदोलन ने अपनी उपलब्धियों से भेदभाव युक्त समाज का स्वरूप बदलने की भरसक कोशिश की।[10]

दलित पैंथर आंदोलन ने सीमाओं में रहने के बावजूद भी हजारों अनुसूचित जाति के लोगों को आत्मविश्वास एवं साहस प्रदान किया । इसलिए ऐसे आंदोलन की जरूरत थी जो अस्पृश्यता की समस्या को हल कर सके। दलित पैंथरों ने इसके लिए काफी अच्छे प्रयास किये जो पहले कभी नहीं हुए थे। पैंथरों ने इस रहस्य का खुलासा किया कि अछूत निष्क्रिय तथा चुप रहने वाले नहीं हैं। उन्होंने अपनी कार्यवाहियों द्वारा दलितों को यह महसूस कराया कि लोकतंत्र के लोगों को अधिकार लड़कर लेने होंगे। पैंथर ही पहले आंदोलनकारी थे जिन्होंने अन्याय, क्रूरता, शोषण तथा असमान जाति व्यवस्था के विरूद्ध आवाज उठायी। उन्होंने वे प्रश्न तथा मुद्दे उठाए जो स्वतंत्रता के बाद भी हल नहीं हुए थे। इस आंदोलन ने लोगों का ध्यान अत्याचार, असमानता की ओर खींचा तथा लोगों में जागरूकता पैदा की इसलिए जब दलित पैंथर आंदोलन उभरा उसमें दलित युवकों का ज्यादा समावेश हुआ।

पैंथरों ने काफी हद तक नीति निर्णायकों को दलितों की समस्याओं से अवगत कराया तथा इन समस्याओं के निदान के लिए उपयुक्त संस्थागत स्त्रोतों पर जोर दिया। इन्होंने डॉ. अम्बेडकर की विचारधारा को आगे बढ़ाने की पहल की। उन्होंने अपने आपको हरिजन और अस्पृश्य के बजाय दलित कहलवाना ज्यादा उचित समझा। उन्होंने युवा पीढ़ी की सोच को समझा और उनको मुकाबले की व्यूह रचना एवं लड़ाकू अवस्था निर्मित करने की शिक्षा दी। आंदोलन में जान

डालने के लिए एक प्रकार का प्रेरक साहित्य लिखा गया। दलित पैंथरों की सभी उपलब्धियां साहित्यिक जोशीली कविताओं की ही देन थी । दलित लेखकों ने समकालीन मराठी साहित्य को झूठा पाया क्योंकि वह दलितों की सामाजिक स्थिति की वास्तविकता को नहीं दर्शाता था। वे दरअसल ऐसा साहित्य चाहते थे जो मानवता के उत्पीड़न को दर्शाये । उन्होंने अस्पृश्यता तथा दलितों के जीवन की भयंकर कठिनाइयों के बारे में समकालीन लेखों में अपना असंतोष प्रकट करना शुरू कर दिया एवं दलित समुदायों पर बढ़ता अत्याचार तथा बिगड़ती स्थिति के बारे में कुछ करने की ठान ली। परिणामस्वरूप दलित साहित्य पद दलितों के उत्पीड़न तथा उनके समग्र बदलाव की मांग को दर्शाने लगा । इस प्रकार दलित कविताओं, कहानियों तथा आत्मकथाओं ने अत्याचार के विरोध में दलितों में क्रांतिकारी धारणा विकसित की थी जिसका श्रेय मुख्यतः दलित पैंथरों को जाता है ।

– डॉ सुरेन्द्र सिंह
एसोशिएट प्रोफेसर इतिहास
मथुरा प्रसाद महाविद्यालय कोंच, जालौन
(उत्तर प्रदेश)–**285205** मो. 9411204553, 6387753359

संदर्भ :

1. चंचरीक कन्हैयालाल, आधुनिक भारत का दलित आंदोलन, नई दिल्ली, पृ० 329 330
2. कुमार अजय, दलित पैंथर आंदोलन, दिल्ली, पृ. 56–57
3. वहीं पृ. 57
4. वही पृ. 58
5. चंचरीक कन्हैयालाल, पूर्वोक्त, पृ. 332
6. गौतम एस.एस., भारतीय दलित आंदोलन और सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन, दिल्ली, पृ. 15
7. तेलतुमडे आनंद, उत्तर अम्बेडकर दलित आंदोलन दशा और दिशा, दिल्ली, पृ. 16–17
8. चंचरीक कन्हैयालाल, पूर्वोक्त, पृ. 332
9. कुमार अजय, पूर्वोक्त, पृ. 85–86
10. वही पृ. 113

लोकतंत्र के प्रति डॉ. अम्बेडकर का दृष्टिकोण

– डॉ. भरतलाल मीणा
– डॉ. महेशचन्द्र गोठवाल

प्रस्तावना

सोलहवीं शताब्दी से विश्व के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक जीवन में हुए परिवर्तनों से लोकतंत्र की आधुनिक अवधारणा का विकास हुआ और मध्ययुगीन सामंती प्रणाली का ह्रास हुआ जिससे मुनष्य को प्रतिष्ठा मिली। ज्यादातर आधुनिक पश्चिमी विद्वानों ने लोकतंत्र को शासन की ऐसी प्रणाली के रूप में परिभाषित करने का प्रयास किया, जिसमें शासन शक्ति व्यवहारिक तौर पर जनप्रतिनिधियों के हाथों में हो, जबकि सैद्धांतिक तौर पर वह जनता में निहित होती है। किंतु अंबेडकर लोकतंत्र के संदर्भ में पश्चिमी जगत के विद्वानों की परिभाषाओं को अपूर्ण, अस्पष्ट मानकर अस्वीकार करते हुये लोकतंत्र की ऐसी ठोस परिभाषा प्रस्तुत करते हैं जो प्रक्रियागत परिभाषा से मौलिक रूप से भिन्न थी तथा लोकतंत्र की 20वीं सदी के सिद्धांतों पर आधारित थी ।

अंबेडकर लोकतांत्रिक शासनप्रणाली में दो बातों का समावेश होना बेहद जरूरी मानते थे पहला, विधि का शासन और दूसरा – सामाजिक, आर्थिक परिवर्तनों के प्रति आस्था, ताकि सामुदायिक जीवन को सामाजिक–आर्थिक न्याय के सिद्धांतों के अनुकूल बनाया जा सके। उनका मानना था कि लोकतंत्र सरकार का एक रूप मात्र नहीं है, बल्कि साहचर्य में रहने का ढंग है, जिसमें सार्वजनिक अनुभव का समवेत रूप से संप्रेषण होता है।[1]

लोकतंत्र के आधार :

लोकतंत्र के आधारों की चर्चा करते हुये अंबेडकर इस मान्यता को स्वीकार करते हैं कि (क) व्यक्ति अपने आप में साध्य, तार्किक और संप्रभु है, वह किसी अन्य

लक्ष्य को पाने का साधन नहीं है, (ख) व्यक्ति के पास कुछ अहस्तांत्रणीय अधिकार होते हैं, जिसकी गारंटी उसे संविधान द्वारा दी जानी चाहिए, (ग) व्यक्ति को विशेष अधिकार प्राप्त करने की पूर्व शर्त के रूप में अपने किसी संवैधानिक अधिकारों को त्यागने की आवश्यकता नहीं है तथा (घ) राज्य निजी व्यक्तियों को दूसरों पर शासन करने की शक्ति नहीं सौंपेगा। इस प्रकार अंबेडकर व्यक्ति को स्वयं में साध्य मानकर लोकतंत्र को और अधिक महत्व प्रदान करते हैं। उन्होंने केवल स्वतंत्रता को प्राथमिकता देने वाली पश्चिमी लोकतांत्रिक कल्पना से हटकर मानव जीवन की गरिमा, समानता, स्वंत्रता, बंधुत्वता और आनंद के अनुसरण को लोकतंत्र का आधार बताया। ये आधार लोकतान्त्रिक समाज के वैल्यू सिस्टम हैं जो समाज में व्याप्त असमानता को कम कर सकता हैं।[2]

सामाजिक लोकतंत्र :

संविधान सभा में अंबेडकर द्वारा व्यक्त यह आशंका आज सत्य साबित हो रही है कि "सामाजिक लोकतंत्र के बिना राजनीतिक लोकतंत्र नहीं टिक सकता।'' अंबेडकर का दृढ़ विश्वास था कि लोकतंत्र के लोकाचार एक आदर्श सामाजिक व्यवस्था का प्रतिनिधित्व करते हैं जो समाज और व्यक्ति को विकास की ओर ले जाता है।[3] इस आदर्श के आलोक में अंबेडकर ने मौजूदा समाज की व्यापक आलोचना की, जो कि लोकतांत्रिक होने का दावा करता है, लेकिन उसके मूल में गैरबराबरी का भाव है। अंबेडकर के अनुसार भारत की जाति व्यवस्था ने लोकतांत्रिक मूल्यों—स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्वता की भावना को ध्वस्त करते हुये भारतीय समाज को कई समानांतर स्वहित समुदायों में विभाजित कर दिया, जो एक स्वस्थ लोकतंत्र के लिए आवश्यक वातावरण और संवाद की अनुमति नहीं देते।[4] अंबेडकर ने जाति व्यवस्था की आलोचना केवल इसलिए नहीं की थी कि यह दलितों के लिए अन्यायपूर्ण और दमनकारी है, बल्कि इसलिए भी की थी कि इसने राष्ट्रीय एकता को भंग कर दिया और लोकतंत्र को असंभव बना दिया।[5]

मजबूत केंद्र :—

अंबेडकर भारतीय संघ में मजबूत केन्द्र के हिमायती थे। उनकी मान्यता थी कि ग्राम छुआछूत और जातिगत वैमनस्यता के स्त्रोत हैं। ग्राम सभाओं को अधिक शक्ति देने का अर्थ होगा—गांवों की सशक्त जातियों (सवर्ण) के वर्चस्व को स्वीकारना तथा आजादी के बाद बहुजन पिछड़ी आबादी को लोकतंत्र का रसास्वादन करने से वंचित करना। यदि कानूनों का क्रियान्वयन राज्य अधीन सेवाओं और उनके अधीनस्थ स्थानीय सवर्ण मानसिकता के लोग के प्रभाव में रहेगा तो उनका सफलतापूर्वक क्रियान्वयन नहीं हो सकेगा। मजबूत केंद्रीय सत्ता में आम नागरिकों को संविधान प्रदत्त अधिकारों तथा सामाजिक न्याय से संबधित कानूनों की निगरानी कारगर ढंग से संभव है। उनकी यह भी मान्यता थी कि संघीय न्यायालय का क्षेत्राधिकार व्यापक हो तथा मूलभूत अधिकारों और अल्पसंख्यकों के लिए किए गए सुरक्षा उपायों को संघीय न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में रखा जाए।[6]

संसदीय लोकतंत्र में सुधारों का समर्थन :

अंबेडकर शासन प्रणाली के तौर पर संसदीय लोकतंत्र को पूर्णतया उसी रूप में स्वीकार नहीं करते जिस रूप में यह विश्व में प्रचलित रही है । वे पश्चिमी यूरोप में संसदीय लोकतंत्र की विकृतियां उजागर होने के कारणों की समीक्षा के पक्षधर थे तथा भारतीय लोकतंत्र के ढांचे और स्वरूप के पीछे की सामाजिक निर्मितियों को समानता के आधार पर व्यवस्थित करना चाहते थे। इस संबंध में संसदीय लोकतंत्र के प्रति संशय व्यक्त करते हुए उन्होंने 22 सितंबर 1944 को अपने भाषण में विचार व्यक्त किया था कि 'हम सभी यह कह रहे हैं कि एक बार हमारे हाथों में सत्ता आने पर, सभी वयस्क नर—नारियों को मतदान का अधिकार मिला तो सभी दुखों का अंत हो जाएगा ।...पर इस बारे में अब भी

मेरे मन में संदेह है।'[7]

धर्मनिरपेक्ष लोकतन्त्र :

अंबेडकर धर्मनिरपेक्ष लोकतान्त्रिक राज्य और समाज के पक्षधर थे। उन्होंने धर्मनिरपेक्षता की वकालत करते हुए कहा था कि इसके मायने यह नहीं हैं कि ''हम धर्मों का त्याग कर देंगे, अपितु यह है कि राज्य किसी विशिष्ट धर्म को संरक्षण प्रदान नहीं करेगा, सभी नागरिकों को अंतःकरण की स्वतंत्रता प्राप्त होगी।'' इस प्रकार धर्मनिरपेक्ष राज्य सभी धर्मों के मामले में तटस्थ और समभावी राज्य है। किंतु अंबेडकर जनहित और समाजिक सुधार की भावना से इस कार्य में बाधक धार्मिक प्रथाओं और विधियों के अंत के लिए संवैधानिक उपाय करने का समर्थन करते हैं। इस दृष्टिकोण के आधार पर अंबेडकर ने सभी हिंदू समुदायों के लिए कानूनों को संहिताबद्ध करके एक जैसे कानून बनाने की आवश्यकता पर बल दिया।[8] उन्होंने धार्मिक ग्रंथों को आधुनिक भारतीय राष्ट्रनिर्माण के मार्गदर्शक ग्रंथ मानने से इनकार किया तथा नए भारतीय राष्ट्र की मार्गदर्शक संहिता के रूप में लोकतांत्रिक, धर्मनिरपेक्ष और कल्याणकारी संविधान के निर्माण में मुख्य भूमिका निभाई। अंबेडकर ने सावरकर के "द्विराष्ट्रवाद" और जिन्ना के ''दो कौमों के सिद्धांत'' को साम्प्रदायिक मानकर आलोचना की। उन्होंने धर्माधारित राष्ट्र के खतरे को रोकने के लिए भारतीय लोकतंत्र में सांप्रदायिक आधार पर किसी भी राजनीतिक पार्टी के गठन पर रोक लगाने पर बल दिया।[9]

राजकीय समाजवाद :

अंबेडकर ने भारतीय संविधान सभा में आजादी के बाद भारत की अर्थव्यवस्था को पुनर्गठित कर स्टेट सोशलिज्म बनाने के उद्देश्य से प्रस्ताव रखा, जिसे व्यापक परिप्रेक्ष्य में लोकतांत्रिक समाजवाद के रूप में वर्णित किया जा सकता है। भारत की विशिष्ट सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों के संदर्भ में यह विचार बेहद महत्वपूर्ण है। अंबेडकर भारतीय अर्थव्यवस्था का लोकतांत्रीकरण करने पर बल देते हैं कि राज्य पर यह दायित्व होना चाहिए कि वह लोगों के आर्थिक जीवन को इस प्रकार योजनाबद्ध करे कि उससे उत्पादकता का सर्वोच्च बिंदु हासिल हो जाए और निजी उद्यम के लिए एक भी मार्ग बंद न हो तथा संपदा के समान वितरण के लिए भी उपबंध किया जाए। अंबेडकर की इस योजना में कृषि क्षेत्र में राजकीय स्वामित्व, बीमा उद्योग का राष्ट्रीयकरण तथा उद्योग क्षेत्र में राजकीय समाजवाद का रूपांतरित रूप भी प्रस्तावित है।[10]

ध्यातव्य है कि अंबेडकर की समाजवादी अवधारणा मार्क्सवादी चिंतन प्रणाली पर आधारित वैज्ञानिक समाजवाद से प्रेरित नहीं है । औपनिवेशिक गुलामी की प्रति छाया से ग्रस्त भारत जैसे पिछड़े कृषि समाज देश के बहुसंख्यक गरीबों, भूमिहीनों तथा अछूत शूद्र जातियों की आर्थिक सामाजिक आजादी से अंबेडकर का सरोकार उन्हें सहज रूप से राजकीय समाजवाद की ओर ले जाता है जिसमें तानाशाही का कोई स्थान नहीं है, क्योंकि तानाशाही में व्यक्तिगत स्वतंत्रता का लोप हो जाता है, इसलिए वे संसदीय लोकतंत्र सहित राजकीय समाजवाद अपनाने की वकालत करते हैं । उनके अनुसार विधि द्वारा राजकीय समाजवाद विहित करने से संसदीय बहुमत उसे निलंबित, संशोधित या निराकृत नहीं कर पाएगा।[11]

लोकतंत्र की सुरक्षा और सफलता के उपाय :

अंबेडकर भारतीय लोकतंत्र के गर्भ में तानाशाही पैदा होने के खतरे से आशंकित थे, इसलिए उन्होंने लोकतंत्र की रक्षा के लिए चेतावनी देते हुए कहा कि हमें सामाजिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए संवैधानिक रास्तों को ही अपनाना होगा, किसी बड़े आदमी की भक्ति में अपनी आजादी और लोकतांत्रिक व्यवस्था के आदर्शों को समर्पित करने से बचना होगा तथा राजनीतिक लोकतंत्र को सामाजिक लोकतंत्र बनाना होगा।

अंबेडकर की यह चेतावनी भारत जैसे देश के लिए बहुत महत्वपूर्ण है जहां समाज में सामंतवाद और व्यक्ति पूजा का भाव अत्यधिक है। अंबेडकर के अनुसार इन तीनों सिद्धांतों में से किसी एक को त्यागने से लोकतंत्र समाप्त हो जाता है।[12]

सफल लोकतंत्र के लिए अंबेडकर ने कुछ शर्ते बतायी है यथा समाज में भयानक विषमता न हो, विपक्ष का अस्तित्व होना चाहिए, कानून और प्रशासन के संदर्भ में सबके प्रति समानता का व्यवहार हो, संवैधानिक नैतिकता हो, लोकतंत्र के नाम पर बहुमत द्वारा अल्पमत के साथ अन्याय नहीं हो तथा समाज की नैतिकता क्रियाशील और जागृत हो और जनता की लोकतंत्र के प्रति गहन निष्ठा हो।[13]

निष्कर्ष :

इस प्रकार अंबेडकर वोट के आधार पर चुनाव कराने और लोकतंत्र को वैधानिक रूप देने को ही पर्याप्त नहीं मानते, बल्कि लोकतंत्र को वास्तविक बनाने के लिए सभी वर्गों की भागीदारी सुनिश्चित करने पर बल देते हैं, जिसका आधार मनुष्य की गरिमा, उसकी संप्रभुता तथा मानव जीवन में स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्वता का अनुसरण करना है। लोकतंत्र के इन आधार मूल्यों के वास्तविक क्रियान्वयन के लिए उन्होंने समाज, राजनीति और अर्थव्यवस्था को लोकतान्त्रिक आदर्शों के अनुरूप पुनर्गठित करने पर बल दिया, ताकि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में न्याय की स्थापना हो सके ।

– डॉ भरत लाल मीणा
असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग
बाबू शोभा राम राजकीय कला महाविद्यालय, अलवर
मोबा. 9252721140

– डॉ. महेश चंद गोठवाल
असिस्टेंट प्रोफेसर,
लोक प्रशासन विभाग
बाबू शोभा राम राजकीय कला महाविद्यालय अलवर
मोबा. 94140 51465

संदर्भ :

1. डॉ. लोकेश कुमार चंदेल, अंबेडकर और लोहिया का लोकतंत्र, राजस्थन हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 2013, पृ 75–76
2. आशिका शिवांगी, बाबा साहब डॉ भीमराव अंबेडकर का लोकतांत्रिक समाजवाद,

   hindi-feminisminindia-com, 14.4.2022
3. विप्लव कुमार, https://countercurrents-org/2022/04/dr-b-r-ambedkars-idea-of-social-democracy/14.4.2022
4. आशिका शिवांगी, पूर्वोक्त
5. योगेन्द्र यादव https://m-tribuneindia-com/news/comment/ambedkar-put-equality-at-the-core-of-democracy-23880115.4.2021
6. मोहन सिंह, डॉ भीमराव अंबेडकर : व्यक्तित्व के कुछ पहलू, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2014, पृ. 47–51
7. डॉ रामायन राम, डॉ अंबेडकर : चिंतन के बुनियादी सरोकार, नवारुण, गाजियाबाद, 2022, पृ 39–40
8. मोहन सिंह, पूर्वोक्त, पृ 21
9. डॉ रामायन राम, पूर्वोक्त, पृ 31 व 51
10. आशिका शिवांगी, पूर्वोक्त,
11. डॉ रामायन राम, पूर्वोक्त, पृ17–20
12. मोहन सिंह, पूर्वोक्त, पृ 60–61
13. डॉ भीमराव अंबेडकर, ष्प्रजातंत्र में सफल कामकाज की कुछ पूर्व सुनिश्चित शर्तें बाबा साहेब डॉ. अंबेडकर सम्पूर्ण वाड्मय खंड 40, डॉ. अंबेडकर प्रतिष्ठान, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा प्रकाशित, अगस्त 2020, पृ. 284 से 296

'भावों का स्पंदन' एक महत्वपूर्ण काव्य–संग्रह

पुस्तक समीक्षा

– रत्न कुमार सांभरिया
(समीक्षक)

राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर के आर्थिक सहयोग से प्रकाशित कवयित्री मंजू किशोर 'रश्मि' के 'भावों का स्पंदन' काव्य–संग्रह में 86 कविताएँ संग्रहित हैं। यह उनका दूसरा कविता संग्रह है। संग्रह की कविताएँ मन के कोने–कोने के भावों को विभिन्न आयामों से उकेरतीं पाठक मन को स्पंदित कर देती हैं। भावों को लेकर लिखी गई ये कविताएँ अलग–अलग तरह के काव्य–रस का अहसास कराती हैं। इनमें निश्चल प्रेम है। हवाओं की खुशबू है। पुष्पों की मह – मह महक है। और हैं रेत से फिसलते लम्हे।

'आगमन' कविता में कवयित्री लिखती हैं –

अभी तृप्त
नहीं हो पाये थे नयन
और रेत से फिसलते
लम्हे ले गए आपको
हवा के संग बहा कर ।

'बोलो और बोलो तुम' कविता में भावों का स्पंदन एक नायाब रूप लिये सामने आता है। यहाँ मन और तन दोनों ही समावेशी होने लगते हैं–

अंग–अंग थिरकने लगता है
मन मयूर हो उठता है
न जाने क्यों
हर दिशा गुंजायमान
हो उठती है।

इसी प्रकार 'होंठों की तूलिका से' कविता अन्तर्मन को झंकृत कर देती हैं। मन का सेतू प्रेम है, इसका भाव अलभ्य है। यहाँ भावों का स्पर्श कविता को समृद्ध और पाठक के मन को संवेदित कर देता है–

नयनों में लिए
आनंद अश्रु
अब भी बैठे हैं
ज्यों के त्यों
अभी भी ठहरा है अहसास
तुम्हारी छुअन का।

इसी प्रकार एक अन्य कविता 'संग तुम आ जाओ' है। कविता में प्रेमभावना का मनोहारी रेखांकन है। मन की लहर पलकों पर उतर आती है और भीगी पलकें प्रीत का दरवाजा खटखटाने लगती हैं–

पलकें बंद दरवाजा
खटखटा रही हैं
उतरने को
दिल की बावड़ी में
निर्मल प्रेम में डूब कर
पूर्णता पाने को।

'प्रेम भावना' कविता में घरोंदे और परिंदे को लेकर जो बिंब उकेरा गया है, वह अनुभूति का अहसास करा देता है, जो निश्छल प्रेम की निर्मिति है। एक ऐसी अनुभूति जिसमें मानव मन की जिज्ञासा निहित होती है–

मेरा प्रेम
भावना है
अनुभूतियों के घरोंदे सेते हैं
ख्वाबों के नन्हें दो परिंदे।

यहाँ दो परिंदे जहाँ दो चक्षुओं की जीवन अभिलाषा है। वहीं घरोंदे प्रेम का आश्रय बन जाता है।

'हारे हुए दिलों के लिये' कविता में कवयित्री मंजू किशोर स्पंदन का एक अलग भाव प्रकट करती है। यह भाव चोटिल हृदयकलिका की कराह है। यह कराह तब उठती है जब प्रेम के मर्म को किसी ना किसी रूप में ठेस पहुँचती है–

हृदय–पटल से टकरा कर
हृदय को भेदते तुम्हारे शब्द

उतरते चले गए थे
दिल की झील में
जैसे किसी ने फेंक दी हो
हिमालय से खींच कर चट्टान ।

'हिमालय से खींच कर चट्टान' में भावों की जो स्थूलता प्रतिपादित होती है, वह दूसरे सिरे की बेवफाई में सन्नद्ध है। सच्चा प्रेम वह नहीं होता, जो देहाकर्षण तक सीमित रहता है। जहाँ प्रेमभावना टकरा कर क्षीण होती है, वहीं प्रेम की धारा सूख कर नदी के दो किनारे बन जाते हैं।

'आओ चाँद आओ' में प्यार – प्रीत की मन की कल्पना का एक सुंदर शब्दचित्र खींचा गया है। मन अहिल्या और आँखें गांधारी में मानव मन के घुटन का जो अर्न्तद्वन्द्व है, वह जीवन का एक नया मुहावरा सृजित करता है –

मन अहिल्या
और
आँखें गांधारी सी
टटोल रहे हैं असीमित
अनन्त आकाश में
हमारा होना।
मौन का नाद
गूँज रहा है
भीतर, बहुत भीतर।

समीक्षक–
– **रत्नकुमार सांभरिया**
भाड़ावास हाउस सी–137, महेश नगर,
जयपुर–302015 मो. 9636053497

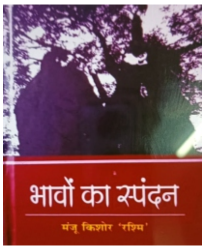

समीक्ष्य कृति : भावों का स्पंदन
कवियित्री : मंजू किशोर रश्मि
प्रकाशक : ज्ञान गीता प्रकाशन
नवीन शाहदरा, दिल्ली–110032
पृष्ठ सं. : 192
मूल्य : 250 रूपये मात्र।

यादव समाज से प्रकाशित पत्र–पत्रिका एवं स्मारिकाएँ

– डॉ. रूपचंद गौतम

भारतीय सिविल परीक्षा की तैयारी करते–करते समाज का इतना रंग जमा कि बाबू राजित सिंह यादव ने परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद भी सरकारी सेवा करनी उचित नहीं समझी। इन्होंने सरकारी सेवा की अपेक्षा सामाजिक सेवा करना ज्यादा उचित समझा। उस समय पत्रकारिता की दुनिया में यादव समाज का **'आभीर समाचार पत्र'** शिकोहाबाद से प्रकाशित होता था। यही एक मात्र अखबार यादव चेतना का प्रतीक था। इसे यादव समाज का पहला समाचार पत्र भी कह सकते है। वर्ष 1923 में इलाहाबाद में आयोजित उत्तर प्रदेशीय यादव महासभा सम्मेलन में बाबू राजित सिंह यादव ने बिखरे कृष्ण वंशजों की अस्मिता प्रतीक अखिल भारत वर्षीय यादव महासभा की स्थापना की। इस एक सूत्रीय व बहु उद्देशीय यादव नाम को सार्थक बनाने के लिए उन्होंने गोरखपुर से वर्ष 1925 में यादव पत्रिका प्रकाशित की।[1] 'यादव' पत्रिका को सभी हिन्दी भाषी क्षेत्रों में पहुँचाने के लिए तथा पत्रकारिता का उचित वातावरण प्राप्त करने के लिए बाबू राजित सिंह यादव अपना क्षेत्र छोड़कर काशी आ गये ।

आंदोलन के प्रणेता और पुरोधा बन कर और 'यादव' पत्रिका को कृष्ण के पाँचजन्य शंक की आवाज बनकर देश के सोये बन्धुओं को जगाने लगे। उनके हृदय में एक अंतर्ज्वाला दैदीप्यमान रहती थी। उन्होंने अहीरों का मार्ग दर्शन करने के लिए बाध्य कर दिया।[2] 'यादव' पत्रिका में लोगों के विचार, समाचार व खोजपूर्ण लेख छपने लगे। जिसकी प्रशंसा में उस युग के मूर्धन्य विद्वान प्रो. परमानंद ने अपनी पुस्तक '**दि यादवाज**' में लिखा है कि 9 नवम्बर 1927 को 'यादव' में पृष्ठ 5–6 पर एक लेख छपा था कि गुजरात में बसी एक महत्त्वपूर्ण अहीरों की शाखा अपने को **भरवाड़** कहती है जो तथ्यपूर्ण है। पत्रिका का अंक दिसम्बर 1972 तक देखा गया।[3] आभीर समाचार के बाद यादव पत्रिका ने यादव

समाज की चेतना के संदर्भ में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की।

चौ. ब्राह्मण प्रकाश के संपादन में **बुनियादी संघर्ष** हिन्दी मासिक पत्रिका वर्ष 1982 में 1145, सेक्टर–12, रामकृष्ण पुरम, नई दिल्ली–22 से प्रकाशित होनी प्रारंभ हुई। **यादव कुल दीपिका** चिरंजी लाल यादव के संपादन में जनवरी 1995 से बी–73, शिवाजी रोड, उत्तरी घोण्डा प्रकाशित होनी प्रारंभ हुई। शीर्षक के नीचे 'यादुवंश' की सांस्कृतिक धरोहर एवं मानवीय मूल्यों को संरक्षित एवं संवर्धित करने वाली हिन्दी/अंग्रेजी में लिखा जाता था। समता, स्वतंत्रता, बंधुता और न्याय पर भारतीय संविधान की नींव रखी गई। प्रत्येक नागरिक को इसके मुताविक समाज बनाना अत्यंत आवश्यक है। भारतीय संविधान भी यही कहता है कि जब तक भारतीय समाज लोकतांत्रिक नहीं बनेगा तब तक देश उन्नति नहीं कर सकता। भारतीय संविधान के उद्देश्य की पूर्ति हेतु महेन्द्र सिंह ने **लोकतांत्रिक राष्ट्रवाद** हिन्दी मासिक पत्र जनवरी, 2004 को राम निवास यादव के संपादन में गाजियाबाद से प्रकाशित किया।[4]

राजवीर सिंह के संपादन में **'यादव शक्ति'** नामक शीर्षक से मासिक पत्रिका जनवरी 2006 को सीतापुर उत्तर प्रदेश से प्रकाशित होनी प्रारंभ हुई। पत्रिका मूलनिवासी की मानसिक गुलाम को तोड़ने मे **'यादव शक्ति'** मील का पत्थर है। पत्रिका केवल हिन्दी राज्यों तक ही सीमित नहीं है, बल्कि गैर हिन्दी भाषी राज्यों में बखूबी के साथ पढ़ी जा रही है। इतना ही नहीं पत्रिका देश के बाहर भी विषमता, पाखंड, अन्याय व शोषण के विरूद्ध बिगुल बजाती है। पत्रिका के कवर पृष्ठ के ऊपर वंचित, पिछड़ों, दलितों, आदिवासियों एवं अल्पसंख्यकों की समाजिक जनजागृति हेतु लिखा जाता रहा है।[5] **साहित्य परिवार** पत्रिका डॉ. सूर्यदीन यादव के संपादन में 3, पुनित कालोनी, पवन चक्की रोड, नडीयाद, गुजरात से अप्रैल 2006 से नियमित प्रकाशित हो रही है। पुस्तकार की यह पत्रिका हिन्दी साहित्य में अपनी पहचान बनाये हुए है। कवर पृष्ठ के अलावा पत्रिका 144 पृष्ठ की है। डायरी, रिपोर्ताज, आत्मकथा, संस्मरण, उपन्यास, कहानी, कविता, नाटक, समीक्षा, समालोचना, अनुवाद, चित्रांकन के रूप में साहित्य परिवार का स्वरूप देखा व महसूस किया जा सकता है। अप्रैल–जून 2008 से **आपका आईना** नामक शीर्षक से डॉ. राम आशीष सिंह पत्रिका प्रकाशित कर रहे हैं। यह पत्रिका समीक्षा प्रकाशन मानिक चंद तालाब, अनीसाबाद, पटना से प्रकाशित हो रही है। प्रकाशन, मुद्रण एवं स्वामित्व सेवा नामक संस्था द्वारा **श्रीकृष्ण उद्घोष** त्रैमासिक पत्रिका डॉ. राजीव राज के संपादन में वर्ष 2013 को 239, प्रेम विहार, विजय नगर इटावा, उत्तर प्रदेश से प्रकाशित होनी प्रारंभ हुई।

राजवीर सिंह यादव के संपादन में हिन्दी मासिक विज्ञान शक्ति जनवरी 2014 से प्रारंभ हुई इसका पंजीकृत कार्यालय 161, बाजार सिघौली, जिला सीतापुर उत्तर प्रदेश में था पर पत्रिका का संपादन नया विधायक निवास, बी–144, तीसरा तल, दारुलशफा, लखनऊ से होता था। पत्रिका गणपति प्रिन्टर्स आलमबाग, लखनऊ से मुद्रित होती थी। इसके संपादक मंडल में रघुनाथ सिंह यादव, राम सिंह प्रेमी, मोहम्मद यूसूफ अंसारी अर्जक, अशोक कुमार पाल, बंशीलाल रावत को जोड़ा गया था ।स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक पल्लवी यादव द्वारा 405 शिवपुरी लेन सिविल लाइन –2 बिजनौर उत्तर प्रदेश से **सोशल ब्रेनवाश** द्विमासिक पत्रिका अक्टूबर 2009 से प्रकाशित होनी प्रारंभ हुई तथा मार्च 2017 तक पढ़ी गई। वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक अपर्णा द्वारा **'गाँव के लोग'** सोशल एंड एजुकेशन ट्रस्ट अहिरान, पोस्ट चमाँव, शिवपुर, वाराणसी, उत्तर प्रदेश से वर्ष 2017 प्रकाशित होनी प्रारंभ हुई।

–डॉ. रूपचंद गौतम
228/9, मंडोली, दिल्ली–93
मोबा. 9868414275

संदर्भ :

1. पिछड़ा वर्ग संदेश, सितम्बर 2020, कवर पृष्ठ
2. वही, अगस्त 2016, पृष्ठ–14
3. वही सितम्बर 2020 कवर पृष्ठ
4. कूर्मि क्षत्रिय जागरण, अप्रैल 2008, संपादकीय
5. वही, पृष्ठ–3

• कौन हो भाई ? •

डॉ . खन्नाप्रसाद अमीन

कौन हो भाई ?
मैं वही हूँ
जो गाय की हत्या पर
पूरे देश में मच जाती है हड़बड़ी
लेकिन मेरी हत्या पर
अंधा - बहरा हो जाता है पूरा देश ।

कौन हो भाई ?
मैं वही हूँ
जो दिन - रात करता हूँ
आपके गली- मुहल्लों में सफाई
फिर भी आप मेरे ऊपर लगाते हो
अछूत होने की मुहर ।

कौन हो भाई ?
मैं वही हूँ
जो सीवरों में दम घुटने से
होती है हमारी मौत
फिर भी नहीं है सरकार के पास
उनका हिसाब -किताब ।

कौन हो भाई ?
मैं वही हूँ
मेरे छूते ही
तुम मानते हो
चीजें हो जाती है अपवित्र
हमारे छूने से
भगवान भी हो जाते हैं अशुद्ध
पेय जल हो जाता है अपेय जल ।

कौन हो भाई ?
मैं वही हूँ
जो अब तुम अंगूठा नहीं काटते
लेकिन एडमिशन लेने से रोकते हो
कॉपी अच्छी होने पर भी
अंक काटते हो ।

कौन हो भाई ?
मैं वही हूँ
जो मंदिर के अंदर बैठकर मांगता है
उन्हें मानते हो तुम पंडित
और हम
मंदिर के बाहर बैठकर मांगते है तो
तुम कहते हो भिखारी ।

कौन हो भाई ?
मैं वही हूँ
दिनभर झेलता हूँ सूरज का ताप
रात को सोता हूँ
छप्पर में सड़कों के आसपास
रोज ढोता हूँ तुम्हारे लिए
ईंट, गारा और पत्थर
फिर भी जीता हूँ बदबूदार जीवन ।

कौन हो भाई ?
मैं वही हूँ
बीज और फसल के बीच में
बैंक और साहूकारों के कर्ज में डूबा
झूल जाता हूँ फँदे पर
फिर भी सरकार के पेट का पानी नहीं हिलता ।

कौन हो भाई ?
मैं वही हूँ
बड़ी बडी इमारतें और महलों का निर्माता
निर्माण के बाद
कभी भी मुझे
अंदर घुसने तक नहीं दिया जाता ।

कौन हो भाई ?
मैं वही हूँ
कठोर कंक्रीट को तोड़कर
समतल सड़क बनाता हूँ
फिर भी सड़क पर गाड़ी चलाना
मेरी किस्मत में नहीं ।

कौन हो भाई ?
मैं वही हूँ
आदमी मुर्दे को पूजता है
अस्थियाँ को पूजता है
प्राणियों को पूजता है
लेकिन मेरा तिरस्कार करता है । ।

संपर्क सूत्र -
40, शुभम् बंगलोज, धर्मी बंगलोज के पास,
जोगणी माता रोड, बाकरोल - 388315
तहसील & जिला - आणंद (गुजरात)
चलभाष - 9824956974

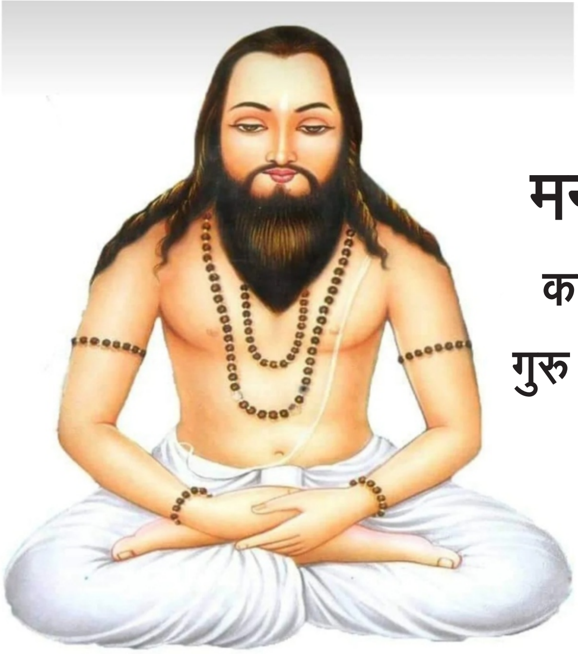

मनखे–मनखे एक समान

का संदेश देने वाले करुणा स्वरुप गुरु घासीदास जी की जयंती–पर्व की हार्दिक शुभकामनाएँ

पंजीयन संख्या
RNI No. MPHIN/2002/9510

डाक पंजीकृत क्रमांक मालवा डिवीजन/204/2021-2023 उज्जैन (म.प्र.)

प्रतिष्ठा में ,

पत्र व्यवहार का पता :
20, बागपुरा, सांवेर रोड,
उज्जैन 456 010 (म.प्र.)

प्रकाशक, मुद्रक पिंकी सत्यप्रेमी ने भारती दलित साहित्य अकादमी की ओर से
मालवा ग्राफिक्स, 29, वररुचि मार्ग, गुरुद्वारे के सामने, फ्रीगंज, उज्जैन फोन : 0734-4000030 से मुदित एवं
20, बागपुरा, सांवेर रोड, उज्जैन 456 010 (म.प्र.) फोन : 0734-2518379 से प्रकाशित।

सम्पादक : डॉ. तारा परमार